nsoh Lrks= jRukdj

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

विषय पृष्ठ-संख्या

देवीस्तोत्राणि

विषय पृष्ठ-संख्या

कालीस्तोत्रम्

सरस्वतीस्तोत्राणि

लक्ष्मीस्तोत्राणि

सीतास्तोत्राणि

राधास्तोत्राणि

विषय | पृष्ठ-संख्या

गायत्रीस्तोत्रम्

अन्नपूर्णास्तोत्रम्

विन्ध्येश्वरीस्तोत्रम्

काशीस्तोत्राणि

गङ्गास्तोत्राणि

यमुनास्तोत्राणि

नर्मदास्तोत्रम्

विषय पृष्ठ-संख्या

प्रकीर्णस्तोत्राणि

आरती

देवीस्तोत्राणि

१—श्रीदेव्याः प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि शरदिन्दुकरोज्ज्वलाभां
सद्रत्नवन्मकरकुण्डलहारभूषाम् ।
दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्रहस्तां
रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं परेशाम् ॥ १ ॥
प्रातर्नमामि महिषासुरचण्डमुण्ड-
शुम्भासुरप्रमुखदैत्यविनाशदक्षाम् ।
ब्रह्मेन्द्ररुद्रमुनिमोहनशीललीलां
चण्डीं समस्तसुरमूर्तिमनेकरूपाम् ॥ २ ॥

जिनकी अंगकान्ति शारदीय चन्द्रमाकी किरणके समान उज्ज्वल है, जो उत्तम रत्नद्वारा निर्मित मकराकृति कुण्डल और हारसे विभूषित हैं, जिनके गहरे नीले हजारों हाथ दिव्यायुधोंसे सम्पन्न हैं तथा जिनके चरण लाल कमलकी कान्ति-सदृश अरुण हैं, ऐसी आप परमेश्वरीका मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ ॥ १ ॥

जो महिषासुर, चण्ड, मुण्ड, शुम्भासुर आदि प्रमुख दैत्योंका विनाश करनेमें निपुण हैं, लीलापूर्वक ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र और मुनियोंको मोहित करनेवाली हैं, समस्त देवताओंकी मूर्तिस्वरूपा हैं तथा अनेक रूपोंवाली हैं, उन चण्डीको मैं प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

प्रातर्भजामि भजतामभिलाषदात्रीं
धात्रीं समस्तजगतां दुरितापहन्त्रीम्।
संसारबन्धनविमोचनहेतुभूतां
मायां परां समधिगम्य परस्य विष्णोः ॥ ३ ॥

॥ इति श्रीदेव्याः प्रातःस्मरणं सम्पूर्णम् ॥

२—सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच

देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनी।
कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः ॥

देव्युवाच

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम्।
मया तवैव स्नेहेनाप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते ॥

जो भजन करनेवाले भक्तोंकी अभिलाषाको पूर्ण करनेवाली, समस्त जगत्‌का धारण-पोषण करनेवाली, पापोंको नष्ट करनेवाली, संसार-बन्धनके विमोचनकी हेतुभूता तथा परमात्मा विष्णुकी परा माया हैं, उनका ध्यान करके मैं प्रातःकाल भजन करता हूँ ॥ ३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीदेवीका प्रातःस्मरण सम्पूर्ण हुआ ॥

शिवजी बोले—हे देवि! तुम भक्तोंके लिये सुलभ हो और समस्त कर्मोंका विधान करनेवाली हो। कलियुगमें कामनाओंकी सिद्धि-हेतु यदि कोई उपाय हो तो उसे अपनी वाणीद्वारा सम्यक्-रूपसे व्यक्त करो।

देवीने कहा—हे देव! आपका मेरे ऊपर बहुत स्नेह है। कलियुगमें समस्त कामनाओंको सिद्ध करनेवाला जो साधन है वह बतलाऊँगी, सुनिये! उसका नाम है 'अम्बास्तुति'।

ॐ अस्य श्रीदुर्गासप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य नारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः।

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति॥ १॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता॥ २॥
सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ३॥

ॐ इस दुर्गासप्तश्लोकी स्तोत्रमन्त्रके नारायण ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, श्रीमहाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती देवता हैं, श्रीदुर्गाकी प्रसन्नताके लिये सप्तश्लोकी दुर्गापाठमें इसका विनियोग किया जाता है।

वे भगवती महामाया देवी ज्ञानियोंके भी चित्तको बलपूर्वक खींचकर मोहमें डाल देती हैं॥ १॥

माँ दुर्गे! आप स्मरण करनेपर सब प्राणियोंका भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषोंद्वारा चिन्तन करनेपर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दुःख, दरिद्रता और भय हरनेवाली देवि! आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करनेके लिये सदा ही दयार्द्र रहता हो॥ २॥

नारायणि! आप सब प्रकारका मंगल प्रदान करनेवाली मंगलमयी हैं, आप ही कल्याणदायिनी शिवा हैं, आप सब पुरुषार्थोंको सिद्ध करनेवाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रोंवाली गौरी हैं; आपको नमस्कार है॥ ३॥

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ ६ ॥
सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ७ ॥

॥ इति श्रीसप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ।

शरणागतों, दीनों एवं पीड़ितोंकी रक्षामें संलग्न रहनेवाली तथा सबकी पीड़ा दूर करनेवाली नारायणी देवि! आपको नमस्कार है ॥ ४ ॥

सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकारकी शक्तियोंसे सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवि! सब भयोंसे हमारी रक्षा कीजिये, आपको नमस्कार है ॥ ५ ॥

देवि! आप प्रसन्न होनेपर सब रोगोंको नष्ट कर देती हैं और कुपित होनेपर मनोवांछित सभी कामनाओंका नाश कर देती हैं। जो लोग आपकी शरणमें हैं, उनपर विपत्ति तो आती ही नहीं। आपकी शरणमें गये हुए मनुष्य दूसरोंको शरण देनेवाले हो जाते हैं ॥ ६ ॥

सर्वेश्वरि! आप इसी प्रकार तीनों लोकोंकी समस्त बाधाओंको शान्त करें और हमारे शत्रुओंका नाश करती रहें ॥ ७ ॥

॥ इस प्रकार श्रीसप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्ण हुई ॥

३—श्रीदुर्गापदुद्धारस्तोत्रम्

नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे
नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे।
नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे॥ १॥
नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे
नमस्ते महायोगिनि ज्ञानरूपे।
नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे॥ २॥
अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य
भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः।

शरणागतोंकी रक्षा करनेवाली तथा भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाली हे शिवे! आपको नमस्कार है। जगत्‌को व्याप्त करनेवाली हे विश्वरूपे! आपको नमस्कार है। हे जगत्‌के द्वारा वन्दित चरणकमलोंवाली! आपको नमस्कार है। जगत्‌का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे! आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये॥ १॥

हे जगत्‌के द्वारा चिन्त्यमानस्वरूपवाली! आपको नमस्कार है। हे महायोगिनि! आपको नमस्कार है। हे ज्ञानरूपे! आपको नमस्कार है। हे सदानन्दरूपे! आपको नमस्कार है। जगत्‌का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे! आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये॥ २॥

हे देवि! एकमात्र आप ही अनाथ, दीन, तृष्णासे व्यथित, भयसे पीड़ित, डरे हुए तथा बन्धनमें पड़े जीवको आश्रय देनेवाली

त्वमेका गतिर्देवि निस्तारकर्त्री
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ३ ॥
अरण्ये रणे दारुणे शत्रुमध्ये-
ऽनले सागरे प्रान्तरे राजगेहे।
त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ४ ॥
अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे
विपत्सागरे मज्जतां देहभाजाम्।
त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतु-
र्नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ५ ॥
नमश्चण्डिके चण्डदुर्दण्डलीला-
समुत्खण्डिताखण्डिताशेषशत्रो ।

तथा एकमात्र आप ही उसका उद्धार करनेवाली हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे। आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये ॥ ३ ॥

हे देवि! वनमें, भीषण संग्राममें, शत्रुके बीचमें, अग्निमें, समुद्रमें, निर्जन तथा विषम स्थानमें और शासनके समक्ष एकमात्र आप ही रक्षा करनेवाली हैं तथा संसारसागरसे पार जानेके लिये नौकाके समान हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे। आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये ॥ ४ ॥

हे देवि! पाररहित, महादुस्तर तथा अत्यन्त भयानक विपत्ति-सागरमें डूबते हुए प्राणियोंकी एकमात्र आप ही शरणस्थली हैं तथा उनके उद्धारकी हेतु हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे। आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये ॥ ५ ॥

अपनी प्रचण्ड तथा दुर्दण्ड लीलासे सभी दुर्दम्य शत्रुओंको समूल नष्ट कर देनेवाली हे चण्डिके। आपको नमस्कार है।

त्वमेका गतिर्देवि निस्तारबीजं
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ६ ॥
त्वमेवाघभावाधृतासत्यवादी-
र्न जाता जितक्रोधनात् क्रोधनिष्ठा।
इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्णा च नाडी
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ७ ॥
नमो देवि दुर्गे शिवे भीमनादे
सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे।
विभूतिः शची कालरात्रिः सती त्वं
नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥ ८ ॥
शरणमसि सुराणां सिद्धविद्याधराणां
मुनिमनुजपशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम्।

हे देवि! आप ही एकमात्र आश्रय हैं तथा भवसागरसे पारगमनकी बीजस्वरूपा हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे! आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ६॥

आप ही पापियोंके दुर्भावग्रस्त मनकी मलिनता हटाकर सत्यनिष्ठामें तथा क्रोधपर विजय दिलाकर अक्रोधमें प्रतिष्ठित होती हैं। आप ही योगियोंकी इडा, पिंगला और सुषुम्णा नाड़ियोंमें प्रवाहित होती हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे! आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ७॥

हे देवि! हे दुर्गे! हे शिवे! हे भीमनादे! हे सरस्वति! हे अरुन्धति! हे अमोघस्वरूपे! आप ही विभूति, शची, कालरात्रि तथा सती हैं। जगत्का उद्धार करनेवाली हे दुर्गे! आपको नमस्कार है; आप मेरी रक्षा करें॥ ८॥

हे देवि! आप देवताओं, सिद्धों, विद्याधरों, मुनियों, मनुष्यों,

नृपतिगृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां
त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे प्रसीद॥ ९ ॥
इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदुद्धारहेतुकम्।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा पठनाद् घोरसङ्कटात्॥ १० ॥
मुच्यते नात्र सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले।
सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्भक्तिमान् सदा॥ ११ ॥
स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम्।
पठनादस्य देवेशि किं न सिद्ध्यति भूतले॥ १२ ॥
स्तवराजमिदं देवि संक्षेपात्कथितं मया॥ १३ ॥

॥ इति श्रीसिद्धेश्वरीतन्त्रे उमामहेश्वरसंवादे श्रीदुर्गापदुद्धारस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

पशुओं तथा लुटेरोंसे पीड़ित जनोंकी शरण हैं। राजाओंके बन्दीगृहमें डाले गये लोगों तथा व्याधियोंसे पीड़ित प्राणियोंकी एकमात्र शरण आप ही हैं। हे दुर्गे! मुझपर प्रसन्न होइये॥ ९॥

विपदाओंसे उद्धारका हेतुस्वरूप यह स्तोत्र मैंने कहा। पृथ्वी-लोकमें, स्वर्गलोकमें अथवा पातालमें—कहीं भी तीनों सन्ध्याकालों अथवा एक सन्ध्याकालमें इस स्तोत्रका पाठ करनेसे प्राणी घोर संकटसे छूट जाता है; इसमें कोई संदेह नहीं है। जो मनुष्य भक्ति-परायण होकर सम्पूर्ण स्तोत्रको अथवा इसके एक श्लोकको ही पढ़ता है, वह समस्त पापोंसे छूटकर परम पद प्राप्त करता है। हे देवेशि! इसके पाठसे पृथ्वीतलपर कौन-सा मनोरथ सिद्ध नहीं हो जाता? अर्थात् सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। हे देवि! मैंने संक्षेपमें यह स्तवराज आपसे कह दिया॥ १०—१३॥

॥ इस प्रकार श्रीसिद्धेश्वरीतन्त्रके अन्तर्गत उमामहेश्वरसंवादमें श्रीदुर्गापदुद्धारस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

४—भुवनेश्वरीकात्यायनीस्तुतिः

ध्यानम्

'ॐ' बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम्॥

स्तुतिः

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य॥ १॥
आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।

ध्यान

मैं भुवनेश्वरी देवीका ध्यान करता हूँ। उनके श्रीअंगोंकी आभा प्रभातकालके सूर्यके समान है और मस्तकपर चन्द्रमाका मुकुट है। वे उभरे हुए स्तनों और तीन नेत्रोंसे युक्त हैं। उनके मुखपर मुसकानकी छटा छायी रहती है और हाथोंमें वरद, अंकुश, पाश एवं अभय-मुद्रा शोभा पाते हैं।

स्तुति

[देवता बोले—] शरणागतकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि! हमपर प्रसन्न होओ। सम्पूर्ण जगत्‌की माता! प्रसन्न होओ। विश्वेश्वरि! विश्वकी रक्षा करो। देवि! तुम्हीं चराचर जगत्‌की अधीश्वरी हो॥ १॥

तुम इस जगत्‌का एकमात्र आधार हो, क्योंकि पृथ्वी-रूपमें तुम्हारी ही स्थिति है। देवि! तुम्हारा पराक्रम अलंघनीय है।

अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥ २ ॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ३ ॥
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥ ४ ॥
सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ५ ॥

तुम्हीं जलरूपमें स्थित होकर सम्पूर्ण जगत्‌को तृप्त करती हो॥ २॥

तुम अनन्त बलसम्पन्न वैष्णवी शक्ति हो। इस विश्वकी कारणभूता परा माया हो। देवि! तुमने इस समस्त जगत्‌को मोहित कर रखा है। तुम्हीं प्रसन्न होनेपर इस पृथ्वीपर मोक्षकी प्राप्ति कराती हो॥ ३॥

देवि! सम्पूर्ण विद्याएँ तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं। जगत्‌में जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब तुम्हारी ही मूर्तियाँ हैं। जगदम्ब! एकमात्र तुमने ही इस विश्वको व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है? तुम तो स्तवन करनेयोग्य पदार्थोंसे परे एवं परा वाणी हो॥ ४॥

जब तुम सर्वस्वरूपा देवी स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करनेवाली हो, तब इसी रूपमें तुम्हारी स्तुति हो गयी। तुम्हारी स्तुतिके लिये इससे अच्छी उक्तियाँ और क्या हो सकती हैं?॥ ५॥

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ६ ॥
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ७ ॥
सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ८ ॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ९ ॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १० ॥

बुद्धिरूपसे सब लोगोंके हृदयमें विराजमान रहनेवाली तथा स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करनेवाली नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है॥ ६॥

कला, काष्ठा आदिके रूपसे क्रमशः परिणाम (अवस्था-परिवर्तन)-की ओर ले जानेवाली तथा विश्वका उपसंहार करनेमें समर्थ नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ ७॥

नारायणि! तुम सब प्रकारका मंगल प्रदान करनेवाली मंगलमयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थोंको सिद्ध करनेवाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रोंवाली गौरी हो। तुम्हें नमस्कार है॥ ८॥

तुम सृष्टि, पालन और संहारकी शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणोंका आधार तथा सर्वगुणमयी हो। नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ ९॥

शरणागतों, दीनों एवं पीड़ितोंकी रक्षामें संलग्न रहनेवाली तथा सबकी पीड़ा दूर करनेवाली नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है॥ १०॥

हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ ११॥
त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १२॥
मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १३॥
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १४॥
गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुंधरे।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १५॥

नारायणि! तुम ब्रह्माणीका रूप धारण करके हंसोंसे जुते हुए विमानपर बैठती तथा कुश-मिश्रित जल छिड़कती रहती हो। तुम्हें नमस्कार है॥ ११॥

माहेश्वरीरूपसे त्रिशूल, चन्द्रमा एवं सर्पको धारण करनेवाली तथा महान् वृषभकी पीठपर बैठनेवाली नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है॥ १२॥

मोरों और मुर्गोंसे घिरी रहनेवाली तथा महाशक्ति धारण करनेवाली कौमारीरूपधारिणी निष्पापे नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ १३॥

शंख, चक्र, गदा और शार्ङ्गधनुषरूप उत्तम आयुधोंको धारण करनेवाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणि! तुम प्रसन्न होओ। तुम्हें नमस्कार है॥ १४॥

हाथमें भयानक महाचक्र लिये और दाढ़ोंपर धरतीको उठाये वाराहीरूपधारिणी कल्याणमयी नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ १५॥

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १६॥
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १७॥
शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १८॥
दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १९॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे।
महारात्रि महाऽविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते॥ २०॥

भयंकर नृसिंहरूपसे दैत्योंके वधके लिये उद्योग करनेवाली तथा त्रिभुवनकी रक्षामें संलग्न रहनेवाली नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ १६॥

मस्तकपर किरीट और हाथमें महावज्र धारण करनेवाली, सहस्र नेत्रोंके कारण उद्दीप्त दिखायी देनेवाली और वृत्रासुरके प्राणोंका अपहरण करनेवाली इन्द्रशक्तिरूपा नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है॥ १७॥

शिवदूतीरूपसे दैत्योंकी महती सेनाका संहार करनेवाली, भयंकर रूप धारण तथा विकट गर्जना करनेवाली नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ १८॥

दाढ़ोंके कारण विकराल मुखवाली, मुण्डमालासे विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपा नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ १९॥

लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महा अविद्यारूपा नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ २०॥

मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते॥ २१॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥ २२॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥ २३॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते॥ २४॥

मेधा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति (ऐश्वर्यरूपा), बाभ्रवी (भूरे रंगकी अथवा पार्वती), तामसी (महाकाली), नियता (संयमपरायणा) तथा ईशा (सबकी अधीश्वरी)-रूपिणी नारायणि! तुम्हें नमस्कार है॥ २१॥

सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकारकी शक्तियोंसे सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवि! सब भयोंसे हमारी रक्षा करो; तुम्हें नमस्कार है॥ २२॥

कात्यायनि! यह तीन लोचनोंसे विभूषित तुम्हारा सौम्य मुख सब प्रकारके भयोंसे हमारी रक्षा करे। तुम्हें नमस्कार है॥ २३॥

भद्रकालि! ज्वालाओंके कारण विकराल प्रतीत होनेवाला, अत्यन्त भयंकर और समस्त असुरोंका संहार करनेवाला तुम्हारा त्रिशूल भयसे हमें बचावे। तुम्हें नमस्कार है॥ २४॥

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव॥ २५॥
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्॥ २६॥
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति॥ २७॥
एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य
धर्मद्विषां देवि महासुराणाम्।

देवि! जो अपनी ध्वनिसे सम्पूर्ण जगत्‌को व्याप्त करके दैत्योंके तेज नष्ट किये देता है, वह तुम्हारा घण्टा हमलोगोंको पापोंसे उसी प्रकार रक्षा करे, जैसे पिता अपने पुत्रोंकी बुरे कर्मोंसे रक्षा करता है॥ २५॥

चण्डिके! तुम्हारे हाथोंमें सुशोभित खड्ग, जो असुरोंके रक्त और चर्बीसे चर्चित है, हमारा मंगल करे। हम तुम्हें नमस्कार करते हैं॥ २६॥

देवि! तुम प्रसन्न होनेपर सब रोगोंको नष्ट कर देती हो और कुपित होनेपर मनोवांछित सभी कामनाओंका नाश कर देती हो। जो लोग तुम्हारी शरणमें हैं, उनपर विपत्ति तो आती ही नहीं; तुम्हारी शरणमें गये हुए मनुष्य दूसरोंको शरण देनेवाले हो जाते हैं॥ २७॥

देवि! अम्बिके! तुमने अपने स्वरूपको अनेक रूपोंमें विभक्त

रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं
कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ॥ २८ ॥
विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या।
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥ २९ ॥
रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥ ३० ॥
विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।

करके नाना प्रकारसे जो इस समय इन धर्मद्रोही महादैत्योंका संहार किया है, वह सब दूसरी कौन कर सकती थी? ॥ २८ ॥

विद्याओंमें, ज्ञानको प्रकाशित करनेवाले शास्त्रोंमें तथा आदिवाक्यों (वेदों)-में तुम्हारे सिवा और किसका वर्णन है? तथा तुमको छोड़कर दूसरी कौन ऐसी शक्ति है, जो इस विश्वको मोह-ममताके घोर अन्धकार-चक्रमें निरन्तर भटका सके ॥ २९ ॥

जहाँ राक्षस, भयंकर विषवाले सर्प, शत्रु, लुटेरोंकी सेना और दावानल हो, वहाँ तथा समुद्रके बीचमें भी साथ रहकर तुम सबकी रक्षा करती हो ॥ ३० ॥

विश्वेश्वरि! तुम विश्वका पालन करती हो। विश्वरूपा हो,

विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥ ३१ ॥
देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥ ३२ ॥
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥ ३३ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयमहापुराणे भुवनेश्वरीकात्यायनीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

इसलिये सम्पूर्ण विश्वको धारण करती हो। तुम भगवान् विश्वनाथकी भी वन्दनीया हो। जो लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक झुकाते हैं, वे सम्पूर्ण विश्वको आश्रय देनेवाले होते हैं ॥ ३१ ॥

देवि! प्रसन्न होओ। जैसे इस समय असुरोंका वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमें शत्रुओंके भयसे बचाओ। सम्पूर्ण जगत्‌का पाप नष्ट कर दो और उत्पात एवं पापोंके फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले महामारी आदि बड़े-बड़े उपद्रवोंको शीघ्र दूर करो ॥ ३२ ॥

विश्वकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि! हम तुम्हारे चरणोंपर पड़े हुए हैं, हमपर प्रसन्न होओ। त्रिलोकनिवासियोंकी पूजनीया परमेश्वरि! सब लोगोंको वरदान दो ॥ ३३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयमहापुराणकी भुवनेश्वरी-
कात्यायनीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

५—कात्यायनीस्तुतिः

श्रीराम उवाच

नमस्ते त्रिजगद्वन्द्ये संग्रामे जयदायिनि।
प्रसीद विजयं देहि कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥ १॥
सर्वशक्तिमये दुष्टरिपुनिग्रहकारिणि।
दुष्टजृम्भिणि संग्रामे जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ २॥
त्वमेका परमा शक्तिः सर्वभूतेष्ववस्थिता।
दुष्टं संहर संग्रामे जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ३॥
रणप्रिये रक्तभक्षे मांसभक्षणकारिणि।
प्रपन्नार्तिहरे युद्धे जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ४॥
खट्वाङ्गासिकरे मुण्डमालाद्योतितविग्रहे।
ये त्वां स्मरन्ति दुर्गेषु तेषां दुःखहरा भव॥ ५॥

श्रीरामजी बोले—त्रिलोकवन्दनीया! युद्धमें विजय देनेवाली! कात्यायनि! आपको बार-बार नमस्कार है। आप मुझपर प्रसन्न हों और मुझे विजय प्रदान करें। सर्वशक्तिमयी, दुष्ट शत्रुओंका निग्रह करनेवाली, दुष्टोंका संहार करनेवाली भगवती! संग्राममें मुझे विजय प्रदान करें, आपको नमस्कार है। आप ही सभी प्राणियोंमें निवास करनेवाली परा शक्ति हैं, संग्राममें दुष्ट राक्षसका संहार करें और मुझे विजय प्रदान करें, आपको नमस्कार है। युद्धप्रिये! शरणागतकी पीड़ा हरनेवाली! तथा [राक्षसोंका] रक्त एवं मांस भक्षण करनेवाली [जगदम्बे!] युद्धमें मुझे विजय प्रदान करें, आपको नमस्कार है॥ १—४॥

हाथमें खट्वांग तथा खड्ग धारण करनेवाली एवं मुण्डमालासे सुशोभित विग्रहवाली भगवती! विषम परिस्थितियोंमें जो आपका स्मरण

त्वत्पादपङ्कजादैन्यं नमस्ते शरणप्रिये।
विनाशय रणे शत्रून् जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ६ ॥
अचिन्त्यविक्रमेऽचिन्त्यरूपसौन्दर्यशालिनि।
अचिन्त्यचरितेऽचिन्त्ये जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ७ ॥
ये त्वां स्मरन्ति दुर्गेषु देवीं दुर्गविनाशिनीम्।
नावसीदन्ति दुर्गेषु जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ८ ॥
महिषासृक्प्रिये संख्ये महिषासुरमर्दिनि।
शरण्ये गिरिकन्ये मे जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ९ ॥
प्रसन्नवदने चण्डि चण्डासुरविमर्दिनि।
संग्रामे विजयं देहि शत्रूञ्जहि नमोऽस्तु ते॥ १० ॥

करते हैं, उनका दुःख हरण कीजिये। शरणागतप्रिये! आप अपने चरणकमलके अनुग्रहसे दीनताका नाश कीजिये; युद्धक्षेत्रमें शत्रुओंका विनाश कीजिये और मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है, पुनः नमस्कार है। आपका पराक्रम, रूप, सौन्दर्य तथा चरित्र अपरिमित होनेके कारण सम्पूर्णरूपसे चिन्तनका विषय बन नहीं सकता। आप स्वयं भी अचिन्त्य हैं। मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है। जो लोग विपत्तियोंमें दुर्गतिका नाश करनेवाली आप भगवतीका स्मरण करते हैं, वे विषम परिस्थितियोंमें दुःखी नहीं होते। आप मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है॥ ५—८॥

युद्धमें महिषासुरका मर्दन करनेवाली तथा उस महिषासुरके रक्त-पानमें अभिरुचि रखनेवाली, शरणग्रहण करनेयोग्य हिमालयसुता! आप मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है। चण्डासुरका नाश

रक्ताक्षि रक्तदशने रक्तचर्चितगात्रके।
रक्तबीजनिहन्त्री त्वं जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ ११॥
निशुम्भशुम्भसंहन्त्रि विश्वकर्त्रि सुरेश्वरि।
जहि शत्रून् रणे नित्यं जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ १२॥
भवान्येतज्जगत्सर्वं त्वं पालयसि सर्वदा।
रक्ष विश्वमिदं मातर्हत्वैतान् दुष्टराक्षसान्॥ १३॥
त्वं हि सर्वगता शक्तिर्दुष्टमर्दनकारिणि।
प्रसीद जगतां मातर्जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ १४॥
दुर्वृत्तवृन्ददमनि सद्वृत्तपरिपालिनि।
निपातय रणे शत्रूञ्जयं देहि नमोऽस्तु ते॥ १५॥

करनेवाली प्रसन्नमुखी चण्डिके! युद्धमें शत्रुओंका संहार कीजिये और मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है। रक्तवर्णके नेत्रवाली, रक्तरंजित दन्तपंक्तिवाली तथा रक्तसे लिप्त शरीरवाली भगवती! आप रक्तबीजका संहार करनेवाली हैं, आप मुझे विजय प्रदान करें, आपको नमस्कार है। निशुंभ तथा शुंभका संहार करनेवाली तथा जगत्‌की सृष्टि करनेवाली सुरेश्वरि! आप नित्य युद्धमें शत्रुओंका संहार कीजिये और मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है॥ ९—१२॥

भवानी! आप सर्वदा इस सम्पूर्ण जगत्‌का पालन करती हैं। मातः! आप इन दुष्ट राक्षसोंको मारकर इस विश्वकी रक्षा कीजिये। दुष्टोंका संहार करनेवाली भगवती! आप सबमें विद्यमान रहनेवाली शक्तिस्वरूपा हैं। जगन्माता! प्रसन्न होइये, मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है। दुराचारियोंका दमन करनेवाली तथा सदाचारियोंका सम्यक्

कात्यायनि जगन्मातः प्रपन्नार्तिहरे शिवे।
संग्रामे विजयं देहि भयेभ्यः पाहि सर्वदा॥ १६॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे श्रीरामकृता कात्यायनीस्तुतिः सम्पूर्णा॥

६—दुर्गास्तुतिः

वेदा ऊचुः

दुर्गे विश्वमपि प्रसीद परमे सृष्ट्यादिकार्यत्रये
ब्रह्माद्याः पुरुषास्त्रयो निजगुणैस्त्वत्स्वेच्छया कल्पिताः।
नो ते कोऽपि च कल्पकोऽत्र भुवने विद्येत मातर्यतः
कः शक्तः परिवर्णितुं तव गुणाँल्लोके भवेद्दुर्गमान्॥ १॥
त्वामाराध्य हरिर्निहत्य समरे दैत्यान् रणे दुर्जयान्
त्रैलोक्यं परिपाति शम्भुरपि ते धृत्वा पदं वक्षसि।

पालन करनेवाली भगवती! युद्धमें शत्रुओंका संहार कीजिये और मुझे विजय प्रदान कीजिये, आपको नमस्कार है। शरणागतोंका दुःख दूर करनेवाली, कल्याण प्रदान करनेवाली जगन्माता कात्यायनी! युद्धमें मुझे विजय प्रदान कीजिये और भयसे सदा रक्षा कीजिये॥ १३—१६॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत श्रीरामद्वारा
की गयी कात्यायनीस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

वेदोंने कहा—दुर्गे! आप सम्पूर्ण जगत्पर कृपा कीजिये। परमे! आपने ही अपने गुणोंके द्वारा स्वेच्छानुसार सृष्टि आदि तीनों कार्योंके निमित्त ब्रह्मा आदि तीनों देवोंकी रचना की है, इसलिये इस जगत्में आपको रचनेवाला कोई भी नहीं है। मातः! आपके दुर्गम गुणोंका वर्णन करनेमें इस लोकमें भला कौन समर्थ हो सकता है!॥ १॥

भगवान् विष्णु आपकी आराधनाके प्रभावसे ही दुर्जय दैत्योंको युद्धस्थलमें मारकर तीनों लोकोंकी रक्षा करते हैं। भगवान् शिवने भी

त्रैलोक्यक्षयकारकं समपिबद्यत्कालकूटं विषं
किं ते वा चरितं वयं त्रिजगतां ब्रूमः परित्र्यम्बिके॥ २॥
या पुंसः परमस्य देहिन इह स्वीयैर्गुणैर्मायया
देहाख्यापि चिदात्मिकापि च परिस्पन्दादिशक्तिः परा।
त्वन्मायापरिमोहितास्तनुभृतो यामेव देहस्थिता
भेदज्ञानवशाद्वदन्ति पुरुषं तस्यै नमस्तेऽम्बिके॥ ३॥
स्त्रीपुंस्त्वप्रमुखैरुपाधिनिचयैर्हीनं परं ब्रह्म यत्
त्वत्तो या प्रथमं बभूव जगतां सृष्टौ सिसृक्षा स्वयम्।
सा शक्तिः परमाऽपि यच्च समभून्मूर्तिद्वयं शक्तित-
स्त्वन्मायामयमेव तेन हि परं ब्रह्मापि शक्त्यात्मकम्॥ ४॥

अपने हृदयपर आपका चरण धारण कर तीनों लोकोंका विनाश करनेवाले कालकूट विषका पान कर लिया था। तीनों लोकोंकी रक्षा करनेवाली अम्बिके! हम आपके चरित्रका वर्णन कैसे कर सकते हैं!॥ २॥

जो अपने गुणोंसे मायाके द्वारा इस लोकमें साकार परम पुरुषके देहस्वरूपको धारण करती हैं और जो पराशक्ति ज्ञान तथा क्रियाशक्तिके रूपमें प्रतिष्ठित हैं; आपकी उस मायासे विमोहित शरीरधारी प्राणी भेदज्ञानके कारण सर्वान्तरात्माके रूपमें विराजमान आपको ही पुरुष कह देते हैं; अम्बिके! उन आप महादेवीको नमस्कार है॥ ३॥

स्त्री-पुरुषरूप प्रमुख उपाधिसमूहोंसे रहित जो परब्रह्म हैं, उसमें जगत्‌की सृष्टिके निमित्त सर्वप्रथम सृजनकी जो इच्छा हुई, वह स्वयं आपकी ही शक्तिसे हुई और वह पराशक्ति भी स्त्री-पुरुषरूप दो मूर्तियोंमें आपकी शक्तिसे ही विभक्त हुई है। इस कारण वह परब्रह्म भी मायामय शक्तिस्वरूप ही है॥ ४॥

तोयोत्थं करकादिकं जलमयं दृष्ट्वा यथा निश्चय-
स्तोयत्वेन भवेद्ग्रहोऽप्यभिमतां तथ्यं तथैव ध्रुवम्।
ब्रह्मोत्थं सकलं विलोक्य मनसा शक्त्यात्मकं ब्रह्म त-
च्छक्तित्वेन विनिश्चितः पुरुषधीः पारं परा ब्रह्मणि ॥ ५ ॥
षट्चक्रेषु लसन्ति ये तनुमतां ब्रह्मादयः षट्शिवा-
स्ते प्रेता भवदाश्रयाच्च परमेशत्वं समायान्ति हि।
तस्मादीश्वरता शिवे नहि शिवे त्वय्येव विश्वाम्बिके
त्वं देवि त्रिदशैकवन्दितपदे दुर्गे प्रसीदस्व नः ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे वेदैः कृता दुर्गास्तुतिः सम्पूर्णा ॥

जिस प्रकार जलसे उत्पन्न ओले आदिको देखकर मान्यजनोंको यह जल ही है—ऐसा ध्रुव निश्चय होता है, उसी प्रकार ब्रह्मसे ही उत्पन्न इस समस्त जगत्को देखकर यह शक्त्यात्मक ब्रह्म ही है—ऐसा मनमें विचार होता है और पुनः परात्पर परब्रह्ममें जो पुरुषबुद्धि है, वह भी शक्तिस्वरूप ही है, ऐसा निश्चित होता है। जगदम्बिके! देहधारियोंके शरीरमें स्थित षट्चक्रोंमें* ब्रह्मादि जो छः विभूतियाँ सुशोभित होती हैं, वे प्रलयान्तमें आपके आश्रयसे ही परमेशपदको प्राप्त होती हैं। इसलिये शिवे! शिवादि देवोंमें स्वयंकी ईश्वरता नहीं है, अपितु वह तो आपमें ही है। देवि! एकमात्र आपके चरणकमल ही देवताओंके द्वारा वन्दित हैं। दुर्गे! आप हमपर प्रसन्न हों ॥ ५-६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत वेदोंद्वारा की गयी दुर्गास्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

---

* योगशास्त्रके अनुसार गुदादेशमें मूलाधारचक्र, गुदा और लिंगके मध्यमें स्वाधिष्ठानचक्र, नाभिदेशमें मणिपूरकचक्र, हृदयमें अनाहतचक्र, कण्ठमें विशुद्धाख्यचक्र तथा भ्रूमध्यमें आज्ञाचक्र स्थित है।

७—जयास्तुतिः

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः॥

'ॐ' ऋषिरुवाच

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।

ध्यान

सिद्धिकी इच्छा रखनेवाले पुरुष जिनकी सेवा करते हैं तथा देवता जिन्हें सब ओरसे घेरे रहते हैं, उन 'जया' नामवाली दुर्गादेवीका ध्यान करे। उनके श्रीअंगोंकी आभा काले मेघके समान श्याम है। वे अपने कटाक्षोंसे शत्रुसमूहको भय प्रदान करती हैं। उनके मस्तकपर आबद्ध चन्द्रमाकी रेखा शोभा पाती है। वे अपने हाथोंमें शंख, चक्र, कृपाण और त्रिशूल धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे सिंहके कंधेपर चढ़ी हुई हैं और अपने तेजसे तीनों लोकोंको परिपूर्ण कर रही हैं।

ऋषि कहते हैं—अत्यन्त पराक्रमी दुरात्मा महिषासुर तथा उसकी दैत्य-सेनाके देवीके हाथसे मारे जानेपर इन्द्र आदि देवता

तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ १ ॥
देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ २ ॥
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ३ ॥
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।

प्रणामके लिये गर्दन तथा कंधे झुकाकर उन भगवती दुर्गाका उत्तम वचनोंद्वारा स्तवन करने लगे। उस समय उनके सुन्दर अंगोंमें अत्यन्त हर्षके कारण रोमांच हो आया था ॥ १ ॥

[देवता बोले—] सम्पूर्ण देवताओंकी शक्तिका समुदाय ही जिनका स्वरूप है तथा जिन देवीने अपनी शक्तिसे सम्पूर्ण जगत्‌को व्याप्त कर रखा है, समस्त देवताओं और महर्षियोंकी पूजनीया उन जगदम्बाको हम भक्तिपूर्वक नमस्कार करते हैं। वे हमलोगोंका कल्याण करें ॥ २ ॥

जिनके अनुपम प्रभाव और बलका वर्णन करनेमें भगवान् शेषनाग, ब्रह्माजी तथा महादेवजी भी समर्थ नहीं हैं, वे भगवती चण्डिका सम्पूर्ण जगत्‌का पालन एवं अशुभ भयका नाश करनेका विचार करें ॥ ३ ॥

जो पुण्यात्माओंके घरोंमें स्वयं ही लक्ष्मीरूपसे, पापियोंके यहाँ दरिद्रतारूपसे, शुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुषोंके हृदयमें बुद्धिरूपसे,

श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ४ ॥
किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि ।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ५ ॥
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा ।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ६ ॥

सत्पुरुषोंमें श्रद्धारूपसे तथा कुलीन मनुष्यमें लज्जारूपसे निवास करती हैं, उन आप भगवती दुर्गाको हम नमस्कार करते हैं। देवि! आप सम्पूर्ण विश्वका पालन कीजिये ॥ ४ ॥

देवि! आपके इस अचिन्त्य रूपका, असुरोंका नाश करनेवाले भारी पराक्रमका तथा समस्त देवताओं और दैत्योंके समक्ष युद्धमें प्रकट किये हुए आपके अद्भुत चरित्रोंका हम किस प्रकार वर्णन करें ॥ ५ ॥

आप सम्पूर्ण जगत्‌की उत्पत्तिमें कारण हैं। आपमें सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण—ये तीनों गुण मौजूद हैं; तो भी दोषोंके साथ आपका संसर्ग नहीं जान पड़ता। भगवान् विष्णु और महादेवजी आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही सबका आश्रय हैं। यह समस्त जगत् आपका अंशभूत है; क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्याकृता परा प्रकृति हैं ॥ ६ ॥

यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन

तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।

स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-

रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च॥ ७॥

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व-

मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः।

मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-

र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि॥ ८॥

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-

मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्।

देवि! सम्पूर्ण यज्ञोंमें जिसके उच्चारणसे सब देवता तृप्ति-लाभ करते हैं, वह स्वाहा आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरोंकी भी तृप्तिका कारण हैं, अतएव सब लोग आपको स्वधा भी कहते हैं॥ ७॥

देवि! जो मोक्षकी प्राप्तिका साधन है, अचिन्त्य महाव्रतस्वरूपा है, समस्त दोषोंसे रहित, जितेन्द्रिय, तत्त्वको ही सार वस्तु माननेवाले तथा मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाले मुनिजन जिसका अभ्यास करते हैं, वह भगवती परा विद्या आप ही हैं॥ ८॥

आप शब्दस्वरूपा हैं, अत्यन्त निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथके मनोहर पदोंके पाठसे युक्त सामवेदका भी आधार आप

देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री॥ ९ ॥
मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा।
श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा॥ १० ॥
ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण॥ ११ ॥

ही हैं। आप देवी, त्रयी (तीनों वेद) और भगवती (छहों ऐश्वर्योंसे युक्त) हैं। इस विश्वकी उत्पत्ति एवं पालनके लिये आप ही वार्ता (खेती एवं आजीविका)—के रूपमें प्रकट हुई हैं। आप सम्पूर्ण जगत्की घोर पीड़ाका नाश करनेवाली हैं॥ ९॥

देवि! जिससे समस्त शास्त्रोंके सारका ज्ञान होता है, वह मेधाशक्ति आप ही हैं। दुर्गम भवसागरसे पार उतारनेवाली नौकारूप दुर्गादेवी भी आप ही हैं। आपकी कहीं भी आसक्ति नहीं है। कैटभके शत्रु भगवान् विष्णुके वक्षःस्थलमें एकमात्र निवास करनेवाली भगवती लक्ष्मी तथा भगवान् चन्द्रशेखरद्वारा सम्मानित गौरी देवी भी आप ही हैं॥ १०॥

आपका मुख मन्द मुसकानसे सुशोभित, निर्मल, पूर्ण चन्द्रमाके बिम्बका अनुकरण करनेवाला और उत्तम सुवर्णकी मनोहर कान्तिसे कमनीय है; तो भी उसे देखकर महिषासुरको क्रोध हुआ और सहसा उसने उसपर प्रहार कर दिया, यह बड़े आश्चर्यकी बात है॥ ११॥

दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल-
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन॥ १२॥
देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य॥ १३॥
ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।

देवि! वही मुख जब क्रोधसे युक्त होनेपर उदयकालके चन्द्रमाकी भाँति लाल और तनी हुई भौंहोंके कारण विकराल हो उठा, तब उसे देखकर जो महिषासुरके प्राण तुरंत नहीं निकल गये, यह उससे भी बढ़कर आश्चर्यकी बात है; क्योंकि क्रोधमें भरे हुए यमराजको देखकर भला, कौन जीवित रह सकता है?॥ १२॥

देवि! आप प्रसन्न हों। परमात्मस्वरूपा आपके प्रसन्न होनेपर जगत्‌का अभ्युदय होता है और क्रोधमें भर जानेपर आप तत्काल ही कितने कुलोंका सर्वनाश कर डालती हैं, यह बात अभी अनुभवमें आयी है; क्योंकि महिषासुरकी यह विशाल सेना क्षणभरमें आपके कोपसे नष्ट हो गयी है॥ १३॥

सदा अभ्युदय प्रदान करनेवाली आप जिनपर प्रसन्न रहती हैं, वे ही देशमें सम्मानित हैं, उन्हींको धन और यशकी प्राप्ति होती है,

धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १४ ॥

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १५ ॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥ १६ ॥

उन्हींका धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने हृष्ट-पुष्ट स्त्री, पुत्र और भृत्योंके साथ धन्य माने जाते हैं ॥ १४ ॥

देवि! आपकी ही कृपासे पुण्यात्मा पुरुष प्रतिदिन अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सदा सब प्रकारके धर्मानुकूल कर्म करता है और उसके प्रभावसे स्वर्गलोकमें जाता है; इसलिये आप तीनों लोकोंमें निश्चय ही मनोवांछित फल देनेवाली हैं ॥ १५ ॥

माँ दुर्गे! आप स्मरण करनेपर सब प्राणियोंका भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषोंद्वारा चिन्तन करनेपर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दुःख, दरिद्रता और भय हरनेवाली देवि! आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करनेके लिये सदा ही दयार्द्र रहता हो ॥ १६ ॥

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि॥ १७॥
दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी॥ १८॥
खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम्।

देवि! इन राक्षसोंके मारनेसे संसारको सुख मिले तथा ये राक्षस चिरकालतक नरकमें रहनेके लिये भले ही पाप करते रहे हों, इस समय संग्राममें मृत्युको प्राप्त होकर स्वर्गलोकमें जायँ—निश्चय ही यही सोचकर आप शत्रुओंका वध करती हैं॥ १७॥

आप शत्रुओंपर शस्त्रोंका प्रहार क्यों करती हैं? समस्त असुरोंको दृष्टिपातमात्रसे ही भस्म क्यों नहीं कर देतीं? इसमें एक रहस्य है। ये शत्रु भी हमारे शस्त्रोंसे पवित्र होकर उत्तम लोकोंमें जायँ—इस प्रकार उनके प्रति भी आपका विचार अत्यन्त उत्तम रहता है॥ १८॥

खड्गके तेजःपुञ्जकी भयंकर दीप्तिसे तथा आपके त्रिशूलके अग्रभागकी घनीभूत प्रभासे चौंधियाकर जो असुरोंकी आँखें फूट नहीं गयीं,

यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्॥ १९॥
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्॥ २०॥
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि॥ २१॥

उसमें कारण यही था कि वे मनोहर रश्मियोंसे युक्त चन्द्रमाके समान आनन्द प्रदान करनेवाले आपके इस सुन्दर मुखका दर्शन करते थे॥ १९॥

देवि! आपका शील दुराचारियोंके बुरे बर्तावको दूर करनेवाला है। साथ ही यह रूप ऐसा है, जो कभी चिन्तनमें भी नहीं आ सकता और जिसकी कभी दूसरोंसे तुलना भी नहीं हो सकती; तथा आपका बल और पराक्रम तो उन दैत्योंका भी नाश करनेवाला है, जो कभी देवताओंके पराक्रमको भी नष्ट कर चुके थे। इस प्रकार आपने शत्रुओंपर भी अपनी दया ही प्रकट की है॥ २०॥

वरदायिनी देवि! आपके इस पराक्रमकी किसके साथ तुलना हो सकती है तथा शत्रुओंको भय देनेवाला एवं अत्यन्त मनोहर ऐसा रूप भी आपके सिवा और कहाँ है? हृदयमें कृपा और युद्धमें निष्ठुरता—ये दोनों बातें तीनों लोकोंके भीतर केवल आपमें ही देखी गयी हैं॥ २१॥

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते॥ २२॥
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥ २३॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि॥ २४॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्॥ २५॥

मातः! आपने शत्रुओंका नाश करके इस समस्त त्रिलोकीकी रक्षा की है। उन शत्रुओंको भी युद्धभूमिमें मारकर स्वर्गलोकमें पहुँचाया है तथा उन्मत्त दैत्योंसे प्राप्त होनेवाले हमलोगोंके भयको भी दूर कर दिया है, आपको हमारा नमस्कार है॥ २२॥

देवि! आप शूलसे हमारी रक्षा करें। अम्बिके! आप खड्गसे भी हमारी रक्षा करें तथा घण्टाकी ध्वनि और धनुषकी टंकारसे भी हमलोगोंकी रक्षा करें॥ २३॥

चण्डिके! पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशामें आप हमारी रक्षा करें तथा ईश्वरि! अपने त्रिशूलको घुमाकर आप उत्तर दिशामें भी हमारी रक्षा करें॥ २४॥

तीनों लोकोंमें आपके जो परम सुन्दर एवं अत्यन्त भयंकर रूप विचरते रहते हैं, उनके द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूलोककी रक्षा करें॥ २५॥

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः॥ २६॥

ऋषिरुवाच

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः॥ २७॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान्॥ २८॥

देव्युवाच

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम्॥ २९॥

देवा ऊचुः

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते॥ ३०॥

अम्बिके! आपके कर-पल्लवोंमें शोभा पानेवाले खड्ग, शूल और गदा आदि जो-जो अस्त्र हों, उन सबके द्वारा आप सब ओरसे हमलोगोंकी रक्षा करें॥ २६॥

ऋषि कहते हैं—इस प्रकार जब देवताओंने जगन्माता दुर्गाकी स्तुति की और नन्दन-वनके दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-चन्दन आदिके द्वारा उनका पूजन किया, फिर सबने मिलकर जब भक्तिपूर्वक दिव्य धूपोंकी सुगन्ध निवेदन की, तब देवीने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए सब देवताओंसे कहा—॥ २७-२८॥

देवी बोलीं—देवताओ! तुम सब लोग मुझसे जिस वस्तुकी अभिलाषा रखते हो, उसे माँगो॥ २९॥

देवताओंने कहा—भगवतीने हमारी सब इच्छा पूर्ण कर दी, अब कुछ भी बाकी नहीं है॥ ३०॥

यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि॥ ३१॥
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने॥ ३२॥
तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम्।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके॥ ३३॥

ऋषिरुवाच

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप॥ ३४॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयमहापुराणे देवैः कृता जयास्तुतिः सम्पूर्णा॥

क्योंकि हमारा वह शत्रु महिषासुर मारा गया। महेश्वरि! इतनेपर भी यदि आप हमें और वर देना चाहती हैं। तो हम जब-जब आपका स्मरण करें, तब-तब आप दर्शन देकर हमलोगोंके महान् संकट दूर कर दिया करें तथा प्रसन्नमुखी अम्बिके! जो मनुष्य इन स्तोत्रोंद्वारा आपकी स्तुति करे, उसे वित्त, समृद्धि और वैभव प्राप्तिके साथ ही उसकी धन और स्त्री आदि सम्पत्तिका विकास भी होता रहे; आप सदा हमपर प्रसन्न रहें॥ ३१—३३॥

ऋषि कहते हैं—राजन्! देवताओंने जब अपने तथा जगत्‌के कल्याणके लिये भद्रकाली देवीको इस प्रकार प्रसन्न किया, तब वे 'तथास्तु' कहकर वहीं अन्तर्धान हो गयीं॥ ३४॥

॥ इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयमहापुराणमें देवताओंद्वारा की गयी जयास्तुति पूर्ण हुई॥

८—कामेश्वरीस्तुतिः

युधिष्ठिर उवाच

नमस्ते परमेशानि ब्रह्मरूपे सनातनि।
सुरासुरजगद्वन्द्ये कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ १॥
न ते प्रभावं जानन्ति ब्रह्माद्यास्त्रिदशेश्वराः।
प्रसीद जगतामाद्ये कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ २॥
अनादिपरमा विद्या देहिनां देहधारिणी।
त्वमेवासि जगद्वन्द्ये कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ३॥
त्वं बीजं सर्वभूतानां त्वं बुद्धिश्चेतना धृतिः।
त्वं प्रबोधश्च निद्रा च कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ४॥
त्वामाराध्य महेशोऽपि कृतकृत्यं हि मन्यते।
आत्मानं परमात्माऽपि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ५॥

युधिष्ठिर बोले—ब्रह्मरूपा सनातनी परमेश्वरी! आपको नमस्कार है। देवताओं, असुरों और सम्पूर्ण विश्वद्वारा वन्दित कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। जगत्‌की आदिकारणभूता कामेश्वरी! आपके प्रभावको ब्रह्मा आदि देवेश्वर भी नहीं जानते हैं; आप प्रसन्न हों, आपको नमस्कार है। जगद्वन्द्ये! आप अनादि, परमा, विद्या और देहधारियोंको देहको धारण करनेवाली हैं, कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। आप सभी प्राणियोंकी बीजस्वरूपा हैं, आप ही बुद्धि, चेतना और धृति हैं, आप ही जागृति और निद्रा हैं। कामेश्वरी! आपको नमस्कार है॥ १—४॥

आपकी आराधना करके परमात्मा शिव भी अपने-आपको कृतकृत्य

दुर्वृत्तवृत्तसंहर्त्रि पापपुण्यफलप्रदे।
लोकानां तापसंहर्त्रि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ६ ॥
त्वमेका सर्वलोकानां सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी।
करालवदने कालि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ७ ॥
प्रपन्नार्तिहरे मातः सुप्रसन्नमुखाम्बुजे।
प्रसीद परमे पूर्णे कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ८ ॥
त्वामाश्रयन्ति ये भक्त्या यान्ति चाश्रयतां तु ते।
जगतां त्रिजगद्धात्रि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ ९ ॥
शुद्धज्ञानमये पूर्णे प्रकृतिः सृष्टिभाविनी।
त्वमेव मातर्विश्वेशि कामेश्वरि नमोऽस्तु ते॥ १० ॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे युधिष्ठिरकृता कामेश्वरीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

मानते हैं, कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। दुराचारियोंके दुराचरणका संहार करनेवाली, पाप-पुण्यके फलको देनेवाली तथा सम्पूर्ण लोकोंके तापका नाश करनेवाली कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। आप ही एकमात्र समस्त लोकोंकी सृष्टि, स्थिति और विनाश करनेवाली हैं। विकराल मुखवाली काली कामेश्वरी! आपको नमस्कार है॥ ५—७ ॥

शरणागतोंकी पीड़ाका नाश करनेवाली, कमलके समान सुन्दर और प्रसन्न मुखवाली माता! आप मुझपर प्रसन्न हों। परमे! पूर्णे! कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। जो भक्तिपूर्वक आपके शरणागत हैं, वे संसारको शरण देनेयोग्य हो जाते हैं। तीनों लोकोंका पालन करनेवाली देवी कामेश्वरी! आपको नमस्कार है। आप शुद्धज्ञानमयी, सृष्टिको उत्पन्न करनेवाली पूर्ण प्रकृति हैं। आप ही विश्वकी माता हैं, कामेश्वरी! आपको नमस्कार है॥ ८—१० ॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत युधिष्ठिरद्वारा की गयी कामेश्वरीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

१—देवीस्तुतिः

ध्यानम्

ॐ घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥

देवा ऊचुः

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥ १॥
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः॥ २॥

ध्यान

जो अपने करकमलोंमें घण्टा, शूल, हल, शंख, मुसल, चक्र, धनुष और बाण धारण करती हैं, शरद् ऋतुके शोभासम्पन्न चन्द्रमाके समान जिनकी मनोहर कान्ति है, जो तीनों लोकोंकी आधारभूता और शुम्भ आदि दैत्योंका नाश करनेवाली हैं तथा गौरीके शरीरसे जिनका प्राकट्य हुआ है, उन महासरस्वती देवीका मैं निरन्तर भजन करता हूँ।

देवता बोले—देवीको नमस्कार है, महादेवी शिवाको सर्वदा नमस्कार है। प्रकृति एवं भद्राको प्रणाम है। हमलोग नियमपूर्वक जगदम्बाको नमस्कार करते हैं॥ १॥

रौद्राको नमस्कार है। नित्या, गौरी एवं धात्रीको बारंबार नमस्कार है। ज्योत्स्नामयी, चन्द्ररूपिणी एवं सुखस्वरूपा देवीको सतत प्रणाम है॥ २॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः॥ ३॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः॥ ४॥
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः॥ ५॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ६॥
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ७॥

शरणागतोंका कल्याण करनेवाली वृद्धि एवं सिद्धिरूपा देवीको हम बारंबार नमस्कार करते हैं। नैर्ऋती (राक्षसोंकी लक्ष्मी), राजाओंकी लक्ष्मी तथा शर्वाणी (शिवपत्नी)—स्वरूपा आप जगदम्बाको बार-बार नमस्कार है॥ ३॥

दुर्गा, दुर्गपारा (दुर्गम संकटसे पार उतारनेवाली), सारा (सबकी सारभूता), सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्रादेवीको सर्वदा नमस्कार है॥ ४॥

अत्यन्त सौम्या तथा अत्यन्त रौद्ररूपा देवीको हम नमस्कार करते हैं, उन्हें हमारा बारंबार प्रणाम है। जगत्की आधारभूता कृतिदेवीको बारंबार नमस्कार है॥ ५॥

जो देवी सब प्राणियोंमें विष्णुमायाके नामसे कही जाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ ६॥

जो देवी सब प्राणियोंमें चेतना कहलाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ ७॥

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ८ ॥
या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ९ ॥
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १० ॥
या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ ११ ॥
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १२ ॥
या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १३ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें बुद्धिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ ८ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें निद्रारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ ९ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें क्षुधारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ १० ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें छायारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ ११ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें शक्तिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ १२ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें तृष्णारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ १३ ॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १४ ॥
या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १५ ॥
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १६ ॥
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १७ ॥
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८ ॥
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १९ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें क्षान्ति (क्षमा)-रूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १४ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें जातिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १५ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें लज्जारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १६ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें शान्तिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १७ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें श्रद्धारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १८ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें कान्तिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है ॥ १९ ॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २०॥
या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २१॥
या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २२॥
या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २३॥
या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २४॥
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २५॥

जो देवी सब प्राणियोंमें लक्ष्मीरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २०॥

जो देवी सब प्राणियोंमें वृत्तिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २१॥

जो देवी सब प्राणियोंमें स्मृतिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २२॥

जो देवी सब प्राणियोंमें दयारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २३॥

जो देवी सब प्राणियोंमें तुष्टिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २४॥

जो देवी सब प्राणियोंमें मातारूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २५॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २६॥
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः॥ २७॥
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ २८॥
स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रया-
त्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः॥ २९॥
या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।

जो देवी सब प्राणियोंमें भ्रान्तिरूपसे स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २६॥

जो जीवोंके इन्द्रियवर्गकी अधिष्ठात्री देवी एवं सब प्राणियोंमें सदा व्याप्त रहनेवाली हैं, उन व्याप्तिदेवीको बारंबार नमस्कार है॥ २७॥

जो देवी चैतन्यरूपसे इस सम्पूर्ण जगत्‌को व्याप्त करके स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारंबार नमस्कार है॥ २८॥

पूर्वकालमें अपने अभीष्टकी प्राप्ति होनेसे देवताओंने जिनकी स्तुति की तथा देवराज इन्द्रने बहुत दिनोंतक जिनका सेवन किया, वह कल्याणकी साधनभूता ईश्वरी हमारा कल्याण और मंगल करे तथा सारी आपत्तियोंका नाश कर डाले॥ २९॥

उद्दण्ड दैत्योंसे सताये हुए हम सभी देवता जिन परमेश्वरीको इस

या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयमहापुराणे देवैः कृता देवीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

१०—आनन्दलहरी

भवानि स्तोतुं त्वां प्रभवति चतुर्भिर्न वदनैः
प्रजानामीशानस्त्रिपुरमथनः पञ्चभिरपि ।
न षड्भिः सेनानीर्दशशतमुखैरप्यहिपति-
स्तदान्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः ॥ १ ॥

समय नमस्कार करते हैं तथा जो भक्तिसे विनम्र पुरुषोंद्वारा स्मरण की जानेपर तत्काल ही सम्पूर्ण विपत्तियोंका नाश कर देती हैं, वे जगदम्बा हमारा संकट दूर करें ॥ ३० ॥

॥ इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयमहापुराणमें देवताओंद्वारा की गयी देवीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

हे भवानि! प्रजापति ब्रह्माजी अपने चार मुखोंसे भी तुम्हारी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं, त्रिपुरविनाशक महादेवजी पाँच मुखोंसे भी तुम्हारा स्तवन नहीं कर सकते, कार्तिकेयजी तो छः मुखोंके रहते हुए भी असमर्थ हैं, इने-गिने मुखवालोंकी तो बात ही क्या है, नागराज शेष हजार मुखोंसे भी तुम्हारा गुणगान नहीं कर पाते, फिर तुम्हीं बताओ, जब इनकी यह दशा है तो दूसरे किसीको और किस प्रकार तुम्हारी स्तुतिका अवसर प्राप्त हो सकता है? ॥ १ ॥

घृतक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदै-
विशिष्यानाख्येयो भवति रसनामात्रविषयः।
तथा ते सौन्दर्यं परमशिवदृङ्मात्रविषयः
कथङ्कारं ब्रूमः सकलनिगमागोचरगुणे ॥ २ ॥
मुखे ते ताम्बूलं नयनयुगले कज्जलकला
ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिकलता।
स्फुरत्काञ्ची शाटी पृथुकटितटे हाटकमयी
भजामि त्वां गौरीं नगपतिकिशोरीमविरतम् ॥ ३ ॥
विराजन्मन्दारद्रुमकुसुमहारस्तनतटी
नदद्वीणानादश्रवणविलसत्कुण्डलगुणा ।

घी, दूध, दाख और मधुकी मधुरताको किसी भी शब्दसे विशेषरूपसे नहीं बताया जा सकता, उसे तो केवल रसना (जिह्वा) ही जानती है। इसी प्रकार तुम्हारा सौन्दर्य केवल महादेवजीके नेत्रोंका ही विषय है, उसे हम क्योंकर बतावें? हे देवि! तुम्हारे गुणोंका वर्णन तो सारे वेद भी नहीं कर सकते॥ २॥

तुम्हारे मुखमें पान है, नेत्रोंमें काजलकी पतली रेखा है, ललाटमें केसरकी बेंदी है, गलेमें मोतीका हार सुशोभित हो रहा है, कटिके निम्नभागमें सुनहली साड़ी है, जिसपर रत्नमयी मेखला (करधनी) चमक रही है, ऐसी वेश-भूषासे सजी हुई गिरिराज हिमालयकी गौरवर्णा कन्या तुमको मैं सदा ही भजता हूँ॥ ३॥

जहाँ पारिजात-पुष्पकी माला सुशोभित हो रही है, उन उरोजोंके समीप बजती हुई वीणाका मधुर नाद श्रवण करते हुए जिनके

नताङ्गी मातङ्गीरुचिरगतिभङ्गी भगवती
सती शम्भोरम्भोरुहचटुलचक्षुर्विजयते ॥ ४ ॥
नवीनार्कभ्राजन्मणिकनकभूषापरिकरै-
र्वृताङ्गी सारङ्गीरुचिरनयनाङ्गीकृतशिवा।
तडित्पीता पीताम्बरललितमञ्जीरसुभगा
ममापर्णा पूर्णा निरवधिसुखैरस्तु सुमुखी ॥ ५ ॥
हिमाद्रेः संभूता सुललितकरैः पल्लवयुता
सुपुष्पा मुक्ताभिर्भ्रमरकलिता चालकभरैः।

कानोंमें कुण्डल शोभा पा रहे हैं, जिनका अंग झुका हुआ है, हथिनीकी भाँति जिनकी मन्द-मनोहर चाल है, जिनके नेत्र कमलके समान सुन्दर और चंचल हैं, वे शम्भुकी सती भार्या भगवती उमा सर्वत्र विजयिनी हो रही हैं ॥ ४ ॥

जिनका अंग नवोदित बाल रविके समान देदीप्यमान मणि और सोनेके आभूषणोंसे अलंकृत है, मृगीके समान जिनके विशाल एवं सुन्दर नेत्र हैं, जिन्होंने शिवको पतिरूपसे स्वीकार किया है, बिजलीके समान जिनकी पीत प्रभा है, जो पीत वस्त्रकी प्रभा पहननेसे और अधिक सुन्दर प्रतीत होनेवाले मंजीरको चरणोंमें धारण करके सुशोभित हो रही हैं, वे निरतिशय आनन्दसे पूर्ण भगवती अपर्णा मुझपर सुप्रसन्न हों ॥ ५ ॥

समस्त रोगोंको नष्ट करनेवाली एक लतानी—जैसी चिदानन्दमयी लता (उमा) सुशोभित हो रही है, वह हिमालयसे उत्पन्न हुई है, सुन्दर हाथ ही उसके पल्लव हैं, मुक्ताका हार ही सुन्दर फूल है, काली-काली अलकें भ्रमरोंकी भाँति उसे आच्छन्न किये हुई हैं,

कृतस्थाणुस्थाना कुचफलनता सूक्तिसरसा
रुजां हन्त्री गन्त्री विलसति चिदानन्दलतिका ॥ ६ ॥
सपर्णामाकीर्णां कतिपयगुणैः सादरमिह
श्रयन्त्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरेवं विलसति।
अपर्णैका सेव्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः
पुराणोऽपि स्थाणुः फलति किल कैवल्यपदवीम् ॥ ७ ॥
विधात्री धर्माणां त्वमसि सकलाम्नायजननी
त्वमर्थानां मूलं धनदनमनीयाङ्घ्रिकमले।
त्वमादिः कामानां जननि कृतकन्दर्पविजये
सतां मुक्तेर्बीजं त्वमसि परमब्रह्ममहिषी ॥ ८ ॥

स्थाणु (शंकरजी अथवा ठूँठ वृक्ष) ही उसके रहनेका आश्रय है, उरोजरूपी फलोंके भारसे वह झुकी हुई है और सुन्दर वाणीरूपी रससे भरी है ॥ ६ ॥

दूसरे लोग कुछ ही गुणोंसे युक्त सपर्णा (पत्तेवाली) लताका आदरपूर्वक सेवन करते हैं, परन्तु हमारी बुद्धि तो इस प्रकार स्फुरित होती है कि इस जगत्‌में सभी लोगोंको एकमात्र अपर्णा (पार्वती या बिना पत्तेकी लता)-का ही सेवन करना चाहिये, जिससे आवृत होकर पुराना स्थाणु (ठूँठ वृक्ष अथवा शिव) भी कैवल्यपदवी (मोक्ष)-रूप फल देता है ॥ ७ ॥

सम्पूर्ण धर्मोंकी सृष्टि करनेवाली और समस्त आगमोंको जन्म देनेवाली तुम्हीं हो। हे देवि! कुबेर भी तुम्हारे चरणोंको वन्दना करते हैं, तुम्हीं समस्त वैभवका मूल हो। हे कामदेवपर विजय पानेवाली माँ! कामनाओंकी आदि कारण भी तुम्हीं हो। तुम परब्रह्मस्वरूप महेश्वरकी पटरानी हो। अतः तुम्हीं संतोंके मोक्षका बीज हो ॥ ८ ॥

प्रभूता भक्तिस्ते यदपि न ममालोलमनस-
स्त्वया तु श्रीमत्या सदयमवलोक्योऽहमधुना।
पयोदः पानीयं दिशति मधुरं चातकमुखे
भृशं शङ्के कैर्वा विधिभिरनुनीता मम मतिः॥ ९॥
कृपापाङ्गालोकं वितर तरसा साधुचरिते
न ते युक्तोपेक्षा मयि शरणदीक्षामुपगते।
न चेदिष्टं दद्यादनुपदमहो कल्पलतिका
विशेषः सामान्यैः कथमितरवल्लीपरिकरैः॥ १०॥
महान्तं विश्वासं तव चरणपङ्केरुहयुगे
निधायान्यन्नैवाश्रितमिह मया दैवतमुमे।

मेरा मन चंचल है, इसलिये यद्यपि मैंने आपकी प्रचुर भक्ति नहीं की है तथापि आप श्रीमतीको इस समय मुझपर अवश्य ही दया-दृष्टि करनी चाहिये। चातक चाहे प्रेम करे या न करे, पर मेघ तो उसके मुखमें मधुर जल गिराता ही है अथवा मुझे बड़ी शंका हो रही है कि मेरी बुद्धि किन-किन विधियोंसे आपमें अनुनीत हो, आपकी ओर लगे॥ ९॥

हे साधु चरित्रोंवाली माँ! तुम बहुत शीघ्र अपनी कृपाकटाक्षयुक्त दृष्टिसे मुझे निहारो। मैं तुम्हारी शरणकी दीक्षा ले चुका हूँ, अब मेरी उपेक्षा करना उचित नहीं है। यदि कल्पलता पग-पगपर अभीष्ट कामनाओंकी पूर्ति न कर सके तो अन्य साधारण लताओंसे इसमें विशेषता ही कैसे रह सकती है?॥ १०॥

हे लम्बोदर गणेशको जन्म देनेवाली उमे! मैंने तुम्हारे युगल चरणारविन्दोंमें बहुत बड़ा विश्वास रखकर किसी अन्य देवताका

तथापि त्वच्चेतो यदि मयि न जायेत सदयं
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥ ११ ॥
अयः स्पर्शे लग्नं सपदि लभते हेमपदवीं
यथा रथ्यापाथः शुचि भवति गङ्गौघमिलितम् ।
तथा तत्तत्पापैरतिमलिनमन्तर्मम यदि
त्वयि प्रेम्णासक्तं कथमिव न जायेत विमलम् ॥ १२ ॥
त्वदन्यस्मादिच्छाविषयफललाभे न नियम-
स्त्वमर्थानामिच्छाधिकमपि समर्था वितरणे ।
इति प्राहुः प्राञ्चः कमलभवनाद्यास्त्वयि मन-
स्त्वदासक्तं नक्तं दिवमुचितमीशानि कुरु तत् ॥ १३ ॥
स्फुरन्नानारत्नस्फटिकमयभित्तिप्रतिफल-
त्त्वदाकारं चञ्चच्छशधरकलासौधशिखरम् ।

आश्रय नहीं लिया तथापि यदि तुम्हारा चित्त मुझपर सदय न हो तो अब मैं किसकी शरण जाऊँगा ? ॥ ११ ॥

जिस प्रकार लोहा पारससे छू जानेपर तत्काल सोना बन जाता है और गलियों [-के नाले]-का जल गंगाजीमें पड़कर पवित्र हो जाता है, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न पापोंसे मलिन हुआ मेरा अन्तःकरण यदि प्रेमपूर्वक तुममें आसक्त हो गया तो वह कैसे निर्मल नहीं होगा ? ॥ १२ ॥

हे ईशानि! तुमसे अन्य किसी देवतासे मनोवांछित फल प्राप्त हो ही जाय, ऐसा नियम नहीं है, परंतु तुम जो पुरुषोंको उनकी इच्छासे अधिक वस्तु भी देनेमें समर्थ हो—इस प्रकार ब्रह्मादि प्राचीन पुरुष कहा करते हैं। इसलिये अब मेरा मन रात-दिन तुममें ही लगा रहता है, अब तुम जो उचित समझो करो ॥ १३ ॥

हे त्रिभुवनमहाराज शिवकी गृहिणी शिवे! जहाँ नाना प्रकारके

मुकुन्दब्रह्मेन्द्रप्रभृतिपरिवारं विजयते
　　तवागारं रम्यं त्रिभुवनमहाराजगृहिणि ॥ १४ ॥
निवासः कैलासे विधिशतमखाद्याः स्तुतिकराः
　　कुटुम्बं त्रैलोक्यं कृतकरपुटः सिद्धिनिकरः।
महेशः प्राणेशस्तदवनिधराधीशतनये
　　न ते सौभाग्यस्य क्वचिदपि मनागस्ति तुलना ॥ १५ ॥
वृषो वृद्धो यानं विषमशनमाशा निवसनं
　　श्मशानं क्रीडाभूर्भुजगनिवहो भूषणविधिः।
समग्रा सामग्री जगति विदितैवं स्मररिपो-
　　र्यदेतस्यैश्वर्यं तव जननि सौभाग्यमहिमा ॥ १६ ॥

रत्न और स्फटिकमणिकी भीतपर तुम्हारा आकार प्रतिबिम्बित हो रहा है, जिसकी अट्टालिकाके शिखरपर प्रतिबिम्बित होकर चन्द्रमाकी कला सुशोभित हो रही है, विष्णु, ब्रह्मा और इन्द्र आदि देवता जिसे घेरकर खड़े रहते हैं, वह तुम्हारा रमणीय भवन विजयी हो रहा है॥ १४ ॥

हे गिरिराजनन्दिनि! तुम्हारा कैलासमें निवास है, ब्रह्मा और इन्द्र आदि तुम्हारी स्तुति किया करते हैं, समस्त त्रिभुवन ही तुम्हारा कुटुम्ब है; आठों सिद्धियोंका समुदाय तुम्हारे सामने हाथ जोड़कर खड़ा रहता है और महेश्वर तुम्हारे प्राणनाथ हैं; तुम्हारे सौभाग्यकी कहीं अल्प भी तुलना नहीं हो सकती ॥ १५ ॥

हे जननि! कामारि शिवका बूढ़ा बैल ही वाहन है, विष ही भोजन है, दिशाएँ ही वस्त्र हैं; श्मशान ही रंगभूमि है और साँप ही आभूषणका काम देते हैं, उनकी यह सारी सामग्री संसारमें प्रसिद्ध ही है, फिर भी जो उनके पास ऐश्वर्य है, वह तुम्हारे ही सौभाग्यकी महिमा है॥ १६ ॥

अशेषब्रह्माण्डप्रलयविधिनैसर्गिकमतिः

श्मशानेष्वासीनः कृतभसितलेपः पशुपतिः।

दधौ कण्ठे हालाहलमखिलभूगोलकृपया

भवत्याः संगत्याः फलमिति च कल्याणि कलये॥ १७॥

त्वदीयं सौन्दर्यं निरतिशयमालोक्य परया

भियैवासीद्गङ्गा जलमयतनुः शैलतनये।

तदेतस्यास्तस्माद्वदनकमलं वीक्ष्य कृपया

प्रतिष्ठामातन्वन्निजशिरसिवासेन गिरिशः॥ १८॥

विशालश्रीखण्डद्रवमृगमदाकीर्णघुसृण-

प्रसूनव्यामिश्रं भगवति तवाभ्यङ्गसलिलम्।

हे कल्याणि! जिनकी बुद्धि स्वभावतः समस्त ब्रह्माण्डका संहार करनेमें ही प्रवृत्त होती है, जो अंगोंमें राख पोतकर श्मशानमें बैठे रहते हैं, [ऐसे निठुर स्वभाववाले] पशुपतिने जो समस्त भूमण्डलपर दया करके कण्ठमें हालाहल विष धारण कर लिया, उसे मैं आपके सत्संगका ही फल समझता हूँ॥ १७॥

हे शैलनन्दिनि! आपके सर्वोत्कृष्ट सौन्दर्यको देखकर अत्यन्त भयके कारण ही गंगाजीने जलमय शरीर धारण कर लिया, इससे गंगाजीके दीन मुखकमलको देखकर दयावश शंकरजी उन्हें अपने सिरपर निवास देकर उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं॥ १८॥

हे भगवति! जिसमें विशाल चन्दनके रस, कस्तूरी और केसरके फूल मिले हुए हैं, ऐसे तुम्हारे अनुलेपनके जलको और चलते हुए

समादाय स्रष्टा चलितपदपांसून्निजकरैः
समाधत्ते सृष्टिं विबुधपुरपङ्केरुहदृशाम् ॥ १९ ॥
वसन्ते सानन्दे कुसुमितलताभिः परिवृते
स्फुरन्नानापद्मे सरसि कलहंसालिसुभगे।
सखीभिः खेलन्तीं मलयपवनान्दोलितजले
स्मरेद्यस्त्वां तस्य ज्वरजनितपीडापसरति ॥ २० ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचिता आनन्दलहरी सम्पूर्णा ॥

११—ललितापञ्चकम्

प्रातः स्मरामि ललितावदनारविन्दं
बिम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम्।

तुम्हारे चरणोंकी धूलिको ही लेकर ब्रह्माजी सुरपुरकी कमलनयनी वनिताओं (अप्सराओं)-की सृष्टि करते हैं॥ १९॥

हे देवि! वसन्त ऋतुमें खिली हुई लताओंसे मण्डित, नाना कमलोंसे सुशोभित एवं हंसोंकी मण्डलीसे अलंकृत सरोवरके भीतर जहाँका जल मलयानिलसे आन्दोलित हो रहा है, [उसमें] सखियोंके साथ क्रीडा करती हुई आपका जो पुरुष ध्यान करता है, उसकी ज्वर-रोगजनित पीड़ा दूर हो जाती है॥ २०॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित आनन्दलहरी सम्पूर्ण हुई ॥

मैं प्रातःकाल श्रीललितादेवीके उस मनोहर मुखकमलका स्मरण करता हूँ, जिनके बिम्बसमान रक्तवर्ण अधर, विशाल मौक्तिक

आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्डलाढ्यं
मन्दस्मितं मृगमदोज्ज्वलभालदेशम् ॥ १ ॥
प्रातर्भजामि ललिताभुजकल्पवल्लीं
रक्ताङ्गुलीयलसदङ्गुलिपल्लवाढ्याम् ।
माणिक्यहेमवलयाङ्गदशोभमानां
पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषुसृणीर्दधानाम् ॥ २ ॥
प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्दं
भक्तेष्टदाननिरतं भवसिन्धुपोतम् ।
पद्मासनादिसुरनायकपूजनीयं
पद्माङ्कुशध्वजसुदर्शनलाञ्छनाढ्यम् ॥ ३ ॥
प्रातः स्तुवे परशिवां ललितां भवानीं
त्रय्यन्तवेद्यविभवां करुणानवद्याम् ।

(मोतीके बुलाक)-से सुशोभित नासिका और कर्णपर्यन्त फैले हुए विस्तीर्ण नयन हैं, जो मणिमय कुण्डल और मन्द मुसकानसे युक्त हैं तथा जिनका ललाट कस्तूरिकातिलकसे सुशोभित है॥ १॥

मैं श्रीललितादेवीकी भुजारूपिणी कल्पलताका प्रातःकाल स्मरण करता हूँ, जो लाल अँगूठीसे सुशोभित सुकोमल अंगुलिरूप पल्लवोंवाली तथा रत्नखचित सुवर्णकंकण और अंगदादिसे भूषित है एवं जिसने पुण्ड्र-ईखके धनुष, पुष्पमय बाण और अंकुश धारण किये हैं॥ २॥

मैं श्रीललितादेवीके चरणकमलोंको, जो भक्तोंको अभीष्ट फल देनेवाले और संसारसागरके लिये सुदृढ़ जहाजरूप हैं तथा कमलासन श्रीब्रह्माजी आदि देवेश्वरोंसे पूजित और पद्म, अंकुश, ध्वज एवं सुदर्शनादि मंगलमय चिह्नोंसे युक्त हैं, प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ॥ ३॥

मैं प्रातःकाल परमकल्याणरूपिणी श्रीललिता भवानीकी स्तुति करता हूँ, जिनका वैभव वेदान्तवेद्य है, जो करुणामयी होनेसे

विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूतां
विद्येश्वरीं निगमवाङ्मनसातिदूराम् ॥ ४ ॥
प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम
कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति।
श्रीशाम्भवीति जगतां जननी परेति
वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति ॥ ५ ॥
यः श्लोकपञ्चकमिदं ललिताम्बिकायाः
सौभाग्यदं सुललितं पठति प्रभाते।
तस्मै ददाति ललिता झटिति प्रसन्ना
विद्यां श्रियं विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम् ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं ललितापञ्चकं सम्पूर्णम् ॥

शुद्धस्वरूपा हैं, विश्वकी उत्पत्ति, स्थिति और लयकी मुख्य हेतु हैं, विद्याकी अधिष्ठात्री देवी हैं तथा वेद, वाणी और मनकी गतिसे अति दूर हैं ॥ ४ ॥

हे ललिते! मैं तेरे पुण्यनाम कामेश्वरी, कमला, महेश्वरी, शाम्भवी, जगज्जननी, परा, वाग्देवी तथा त्रिपुरेश्वरी आदिका प्रातःकाल अपनी वाणीद्वारा उच्चारण करता हूँ ॥ ५ ॥

माता ललिताके अति सौभाग्यप्रद और सुललित इन पाँच श्लोकोंको जो पुरुष प्रातःकाल पढ़ता है, उसे शीघ्र ही प्रसन्न होकर ललितादेवी विद्या, धन, निर्मल सुख और अनन्त कीर्ति देती हैं ॥ ६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यकृत ललितापंचक सम्पूर्ण हुआ ॥

१२—मीनाक्षीपञ्चरत्नम्

उद्यद्भानुसहस्रकोटिसदृशां केयूरहारोज्ज्वलां
बिम्बोष्ठीं स्मितदन्तपङ्क्तिरुचिरां पीताम्बरालङ्कृताम्।
विष्णुब्रह्मसुरेन्द्रसेवितपदां तत्त्वस्वरूपां शिवां
मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि सन्ततमहं कारुण्यवारांनिधिम्॥ १॥
मुक्ताहारलसत्किरीटरुचिरां पूर्णेन्दुवक्त्रप्रभां
शिञ्जन्नूपुरकिङ्किणीमणिधरां पद्मप्रभाभासुराम्।
सर्वाभीष्टफलप्रदां गिरिसुतां वाणीरमासेवितां। मीनाक्षीं०॥ २॥
श्रीविद्यां शिववामभागनिलयां ह्रीङ्कारमन्त्रोज्ज्वलां
श्रीचक्राङ्कितबिन्दुमध्यवसतिं श्रीमत्सभानायिकाम्।

जो उदय होते हुए सहस्रकोटि सूर्योंके सदृश आभावाली हैं, केयूर और हार आदि आभूषणोंसे भव्य प्रतीत होती हैं, बिम्बाफलके समान अरुण ओठोंवाली हैं, मधुर मुसकानयुक्त दन्तावलिसे जो सुन्दरी मालूम होती हैं तथा पीताम्बरसे अलंकृता हैं; ब्रह्मा, विष्णु आदि देवनायकोंसे सेवित चरणोंवाली उन तत्त्वस्वरूपिणी कल्याणकारिणी करुणावरुणालया श्रीमीनाक्षीदेवीको मैं निरन्तर वन्दन करता हूँ॥ १॥

जो मोतीकी लड़ियोंसे सुशोभित मुकुट धारण किये सुन्दर मालूम होती हैं, जिनके मुखकी प्रभा पूर्णचन्द्रके समान है, जो झनकारते हुए नूपुर (पायजेब), किंकिणी (करधनी) तथा अनेकों मणियाँ धारण किये हुए हैं, कमलकी-सी आभासे भासित होनेवाली, सबको अभीष्ट फल देनेवाली, सरस्वती और लक्ष्मी आदिसे सेविता उन गिरिराजनन्दिनी करुणावरुणालया श्रीमीनाक्षीदेवीको मैं निरन्तर वन्दन करता हूँ॥ २॥

जो श्रीविद्या हैं, भगवान् शंकरके वामभागमें विराजमान हैं, 'ह्रीं' बीजमन्त्रसे सुशोभिता हैं, श्रीचक्रांकित बिन्दुके मध्यमें निवास करती

श्रीमत्षण्मुखविघ्नराजजननीं श्रीमज्जगन्मोहिनीं। मीनाक्षीं० ॥ ३ ॥

श्रीमत्सुन्दरनायिकां भयहरां ज्ञानप्रदां निर्मलां
श्यामाभां कमलासनार्चितपदां नारायणस्यानुजाम्।
वीणावेणुमृदङ्गवाद्यरसिकां नानाविधामम्बिकां। मीनाक्षीं० ॥ ४ ॥

नानायोगिमुनीन्द्रहृत्सुवसतिं नानार्थसिद्धिप्रदां
नानापुष्पविराजिताङ्घ्रियुगलां नारायणेनार्चिताम्।
नादब्रह्ममयीं परात्परतरां नानार्थतत्त्वात्मिकां। मीनाक्षीं० ॥ ५ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं मीनाक्षीपञ्चरत्नं सम्पूर्णम् ॥

हैं तथा देवसभाकी अधिनेत्री हैं, उन श्रीस्वामी कार्तिकेय और गणेशजीकी माता जगन्मोहिनी करुणावरुणालया श्रीमीनाक्षीदेवीका मैं निरन्तर वन्दन करता हूँ॥ ३ ॥

जो अति सुन्दर स्वामिनी हैं, भयहारिणी हैं, ज्ञानप्रदायिनी हैं, निर्मला और श्यामला हैं, कमलासन श्रीब्रह्माजीद्वारा जिनके चरणकमल पूजे गये हैं तथा श्रीनारायण (कृष्णचन्द्र)-की जो अनुजा (छोटी बहन) हैं; वीणा, वेणु, मृदंगादि वाद्योंकी रसिका उन विचित्र लीलाविहारिणी करुणावरुणालया श्रीमीनाक्षीदेवीका मैं निरन्तर वन्दन करता हूँ॥ ४ ॥

जो अनेकों योगिजन और मुनीश्वरोंके हृदयमें निवास करनेवाली तथा नाना प्रकारके पदार्थोंकी प्राप्ति करानेवाली हैं, जिनके चरणयुगल विचित्र पुष्पोंसे सुशोभित हो रहे हैं, जो श्रीनारायणसे पूजिता हैं तथा जो नादब्रह्ममयी, परेसे भी परे और नाना पदार्थोंकी तत्त्वस्वरूपा हैं, उन करुणावरुणालया श्रीमीनाक्षीदेवीका मैं निरन्तर वन्दन करता हूँ॥ ५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यकृत मीनाक्षीपञ्चरत्न सम्पूर्ण हुआ ॥

१३—भवान्यष्टकम्

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता।
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि॥ १॥

भवाब्धावपारे महादुःखभीरुः
पपात प्रकामी प्रलोभी प्रमत्तः।
कुसंसारपाशप्रबद्धः सदाहं। गतिस्त्वं०॥ २॥

न जानामि दानं न च ध्यानयोगं
न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्रमन्त्रम्।
न जानामि पूजां न च न्यासयोगं। गतिस्त्वं०॥ ३॥

न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं
न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित्।

हे भवानि! पिता, माता, भाई, दाता, पुत्र, पुत्री, भृत्य, स्वामी, स्त्री, विद्या और वृत्ति—इनमेंसे कोई भी मेरा नहीं है, हे देवि! अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो॥ १॥

मैं अपार भवसागरमें पड़ा हुआ हूँ, महान् दुःखोंसे भयभीत हूँ; कामी, लोभी, मतवाला तथा संसारके घृणित बन्धनोंमें बँधा हुआ हूँ, हे भवानि! अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो॥ २॥

हे भवानि! मैं न तो दान देना जानता हूँ और न ध्यानमार्गका ही मुझे पता है, तन्त्र और स्तोत्र-मन्त्रोंका भी मुझे ज्ञान नहीं है, पूजा तथा न्यास आदिकी क्रियाओंसे तो मैं एकदम कोरा हूँ, अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो॥ ३॥

न मैं पुण्य जानता हूँ न तीर्थ, न मुक्तिका पता है न लयका।

न जानामि भक्तिं व्रतं वापि मातर्गतिस्त्वं० ॥ ४ ॥

कुकर्मी कुसङ्गी कुबुद्धिः कुदासः
कुलाचारहीनः कदाचारलीनः ।
कुदृष्टिः कुवाक्यप्रबन्धः सदाहं। गतिस्त्वं० ॥ ५ ॥

प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं
दिनेशं निशीथेश्वरं वा कदाचित् ।
न जानामि चान्यत् सदाहं शरण्ये। गतिस्त्वं० ॥ ६ ॥

विवादे विषादे प्रमादे प्रवासे
जले चानले पर्वते शत्रुमध्ये ।
अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि ।गतिस्त्वं० ॥ ७ ॥

हे मातः! भक्ति और व्रत भी मुझे ज्ञात नहीं है, हे भवानि! अब केवल तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ॥ ४ ॥

मैं कुकर्मी, बुरी संगतिमें रहनेवाला, दुर्बुद्धि, दुष्टदास, कुलोचित सदाचारसे हीन, दुराचारपरायण, कुत्सित दृष्टि रखनेवाला और सदा दुर्वचन बोलनेवाला हूँ, हे भवानि! मुझ अधमकी अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ॥ ५ ॥

मैं ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य किसी भी देवताको नहीं जानता, हे शरण देनेवाली भवानि! अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ॥ ६ ॥

हे शरण्ये! तुम विवाद, विषाद, प्रमाद, परदेश, जल, अनल, पर्वत, वन तथा शत्रुओंके मध्यमें सदा ही मेरी रक्षा करो, हे भवानि! अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ॥ ७ ॥

अनाथो दरिद्रो जरारोगयुक्तो
महाक्षीणदीनः सदा जाड्यवक्त्रः।
विपत्तौ प्रविष्टः प्रणष्टः सदाहं ।गतिस्त्वं०॥ ८॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं भवान्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥

१४—तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम्

[योगनिद्रास्तुतिः]

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम्।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः॥ १॥

ब्रह्मोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता॥ २॥

हे भवानि! मैं सदासे ही अनाथ, दरिद्र, जरा-जीर्ण, रोगी, अत्यन्त दुर्बल, दीन, गूँगा, विपद्‌ग्रस्त और नष्टप्राय हूँ, अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यकृत भवान्यष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

जो इस विश्वकी अधीश्वरी, जगत्‌को धारण करनेवाली, संसारका पालन और संहार करनेवाली तथा तेजःस्वरूप भगवान् विष्णुकी अनुपम शक्ति हैं, उन्हीं भगवती निद्रादेवीकी भगवान् ब्रह्मा स्तुति करने लगे॥ १॥

ब्रह्माजीने कहा—देवि! तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और तुम्हीं वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं। तुम्हीं जीवनदायिनी सुधा

अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा॥ ३॥
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत्।
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा॥ ४॥
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने।
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये॥ ५॥
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी॥ ६॥

हो। नित्य अक्षर प्रणवमें अकार, उकार, मकार—इन तीन मात्राओंके रूपमें तुम्हीं स्थित हो तथा इन तीन मात्राओंके अतिरिक्त जो बिन्दुरूपा नित्य अर्धमात्रा है, जिसका विशेषरूपसे उच्चारण नहीं किया जा सकता, वह भी तुम्हीं हो। देवि! तुम्हीं संध्या, सावित्री तथा परम जननी हो॥ २-३॥

देवि! तुम्हीं इस विश्व-ब्रह्माण्डको धारण करती हो। तुमसे ही इस जगत्‌की सृष्टि होती है। तुम्हींसे इसका पालन होता है और सदा तुम्हीं कल्पके अन्तमें सबको अपना ग्रास बना लेती हो॥ ४॥

जगन्मयी देवि! इस जगत्‌की उत्पत्तिके समय तुम सृष्टिरूपा हो, पालनकालमें स्थितिरूपा हो तथा कल्पान्तके समय संहाररूप धारण करनेवाली हो॥ ५॥

तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहरूपा, महादेवी और महासुरी हो॥ ६॥

प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी।
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा॥ ७ ॥
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च॥ ८ ॥
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा॥ ९ ॥
सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी॥ १० ॥
यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा॥ ११ ॥

तुम्हीं तीनों गुणोंको उत्पन्न करनेवाली सबकी प्रकृति हो। भयंकर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि भी तुम्हीं हो॥ ७॥

तुम्हीं श्री, तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्री और तुम्हीं बोधस्वरूपा बुद्धि हो। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो॥ ८॥

तुम खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा तथा गदा, चक्र, शंख और धनुष धारण करनेवाली हो। बाण, भुशुण्डी और परिघ—ये भी तुम्हारे अस्त्र हैं॥ ९॥

तुम सौम्य और सौम्यतर हो—इतना ही नहीं, जितने भी सौम्य एवं सुन्दर पदार्थ हैं, उन सबकी अपेक्षा तुम अत्यधिक सुन्दरी हो। पर और अपर—सबसे परे रहनेवाली परमेश्वरी तुम्हीं हो॥ १०॥

सर्वस्वरूपे देवि! कहीं भी सत्-असत्‌रूप जो कुछ वस्तुएँ हैं और उन सबकी जो शक्ति है, वह तुम्हीं हो। ऐसी अवस्थामें तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है?॥ ११॥

यथा त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत्।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः॥ १२॥
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्॥ १३॥
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ॥ १४॥
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ॥ १५॥

॥ इति तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तं सम्पूर्णम् ॥

जो इस जगत्‌की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान्‌को भी जब तुमने निद्राके अधीन कर दिया है, तब तुम्हारी स्तुति करनेमें यहाँ कौन समर्थ हो सकता है?॥ १२॥

मुझको, भगवान् शंकरको तथा भगवान् विष्णुको भी तुमने ही शरीर धारण कराया है; अतः तुम्हारी स्तुति करनेकी शक्ति किसमें है?॥ १३॥

देवि! तुम तो अपने इन उदार प्रभावोंसे ही प्रशंसित हो। ये जो दोनों दुर्धर्ष असुर मधु और कैटभ हैं, इनको मोहमें डाल दो और जगदीश्वर भगवान् विष्णुको शीघ्र ही जगा दो। साथ ही इनके भीतर इन दोनों महान् असुरोंको मार डालनेकी बुद्धि उत्पन्न कर दो॥ १४-१५॥

॥ इस प्रकार तन्त्रोक्त रात्रिसूक्त सम्पूर्ण हुआ ॥

१५—पार्वतीस्तुतिः

वीरक उवाच

नतसुरासुरमौलिमिलन्मणिप्रचयकान्तिकरालनखाङ्किते।
नगसुते शरणागतवत्सले तव नतोऽस्मि नतार्तिविनाशिनि॥ १॥
तपनमण्डलमण्डितकन्धरे पृथुसुवर्णसुवर्णनगद्युते।
विषभुजङ्गनिषङ्गविभूषिते गिरिसुते भवतीमहमाश्रये॥ २॥
जगति कः प्रणताभिमतं ददौ झटिति सिद्धनुते भवती यथा।
जगति कां च न वाञ्छति शङ्करो भुवनधृत्तनये भवतीं यथा॥ ३॥
विमलयोगविनिर्मितदुर्जयस्वतनुतुल्यमहेश्वरमण्डले।
विदलितान्धकबान्धवसंहतिः सुरवरैः प्रथमं त्वमभिष्टुता॥ ४॥

वीरकने कहा—गिरिराजकुमारी! आपके चरण-नख प्रणत हुए सुरों और असुरोंके मुकुटोंमें लगी हुई मणिसमूहोंकी उत्कट कान्तिसे सुशोभित होते रहते हैं। आप शरणागतवत्सला तथा प्रणतजनोंका कष्ट दूर करनेवाली हैं। मैं आपके चरणोंमें नमस्कार कर रहा हूँ॥ १॥

गिरिनन्दिनि! आपके कन्धे सूर्यमण्डलके समान चमकते हुए सुशोभित हो रहे हैं। आपकी शरीरकान्ति प्रचुर सुवर्णसे परिपूर्ण सुमेरु गिरिकी तरह है। आप विषैले सर्परूपी तरकशसे विभूषित हैं, मैं आपका आश्रय ग्रहण करता हूँ॥ २॥

सिद्धोंद्वारा नमस्कार की जानेवाली देवि! आपके समान जगत्में प्रणतजनोंके अभीष्टको तुरंत प्रदान करनेवाला दूसरा कौन है? गिरिजे! इस जगत्में भगवान् शंकर आपके समान किसी अन्यकी इच्छा नहीं करते॥ ३॥

आपने महेश्वरमण्डलको निर्मल योगबलसे निर्मित अपने शरीरके तुल्य दुर्जय बना दिया है। आप मारे गये अन्धकासुरके भाई-बन्धुओंका संहार करनेवाली हैं। सुरवरोंने सर्वप्रथम आपकी स्तुति की है॥ ४॥

सितसटापटलोद्धतकन्धराभरमहामृगराजरथस्थिता ।
विमलशक्तिमुखानलपिङ्गलायतभुजौघविपिष्टमहासुरा ॥ ५ ॥
निगदिता भुवनैरिति चण्डिका जननि शुम्भनिशुम्भनिषूदनी ।
प्रणतचिन्तितदानवदानवप्रमथनैकरतिस्तरसा भुवि ॥ ६ ॥
वियति वायुपथे ज्वलनोज्ज्वलेऽवनितले तव देवि च यद्वपुः ।
तदजितेऽप्रतिमे प्रणमाम्यहं भुवनभाविनि ते भववल्लभे ॥ ७ ॥
जलधयो ललितोद्धतवीचयो हुतवहद्युतयश्च चराचरम् ।
फणसहस्रभृतश्च भुजङ्गमास्त्वदभिधास्यति मय्यभयङ्कराः ॥ ८ ॥

आप श्वेत वर्णकी जटा (केश)-समूहसे आच्छादित कन्धेवाले विशालकाय सिंहरूपी रथपर आरूढ़ होती हैं। आपने चमकती हुई शक्तिके मुखसे निकलनेवाली अग्निकी कान्तिसे पीली पड़नेवाली लम्बी भुजाओंसे प्रधान-प्रधान असुरोंको पीसकर चूर्ण कर दिया है ॥ ५ ॥

जननि! त्रिभुवनके प्राणी आपको शुम्भ-निशुम्भका संहार करनेवाली चण्डिका कहते हैं। एकमात्र आप इस भूतलपर विनम्रजनोंद्वारा चिन्तन किये गये प्रधान-प्रधान दानवोंका वेगपूर्वक मर्दन करनेमें उत्साह रखनेवाली हैं ॥ ६ ॥

देवि! आप अजेय, अनुपम, त्रिभुवनसुन्दरी और शिवजीकी प्राणप्रिया हैं, आपका जो शरीर आकाशमें, वायुके मार्गमें, अग्निकी भीषण ज्वालाओंमें तथा पृथ्वीतलपर भासमान है, उसे मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ७ ॥

अस्थिर एवं भीषण लहरोंसे युक्त महासागर, अग्निकी लपटें, चराचर जगत् तथा हजारों फण धारण करनेवाले बड़े-बड़े नाग—ये सभी आपका नाम लेनेवाले मेरे लिये भयंकर नहीं दीख पड़ते ॥ ८ ॥

भगवति स्थिरभक्तजनाश्रये प्रतिगतो भवतीचरणाश्रयम्।
करणजातमिहास्तु ममाचलं नुतिलवाप्तिफलाशयहेतुतः॥ ९ ॥
प्रशममेहि ममात्मजवत्सले तव नमोऽस्तु जगत्त्रयसंश्रये।
त्वयि ममास्तु मतिः सततं शिवे शरणगोऽस्मि नतोऽस्मि नमोऽस्तु ते॥ १० ॥

॥ इति श्रीमत्स्यमहापुराणे वीरककृता पार्वतीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

१६—पार्वतीस्तुतिः

ब्रह्मादय ऊचुः

त्वं माता जगतां पितापि च हरः सर्वे इमे बालका-
स्तस्मात्त्वच्छिशुभावतः सुरगणे नास्त्येव ते सम्भ्रमः।

अनन्य भक्तजनोंको आश्रयभूता भगवति! मैं आपके चरणोंकी शरणमें आ पड़ा हूँ। आपके चरणोंमें प्रणत होनेसे प्राप्त हुए थोड़े-से फलके कारण मेरा इन्द्रियसमुदाय आपके चरणोंमें अटल स्थान प्राप्त करे॥ ९॥

पुत्रवत्सले! मेरे लिये पूर्णरूपसे शान्त हो जाइये। त्रिलोकीकी आश्रयभूता देवि! आपको नमस्कार है। शिवे! मेरी बुद्धि निरन्तर आपके चिन्तनमें ही लगी रहे। मैं आपके शरणागत हूँ और चरणोंमें पड़ा हूँ। आपको नमस्कार है॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीमत्स्यमहापुराणमें वीरककृत पार्वतीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

ब्रह्मा आदि देवताओंने कहा—माता! शिवसुन्दरी! आप तीनों लोकोंकी माता हैं और शिवजी पिता हैं तथा ये सभी देवतागण आपके बालक हैं। अपनेको आपका शिशु माननेके कारण देवताओंको

मातस्त्वं शिवसुन्दरि त्रिजगतां लज्जास्वरूपा यत-
स्तस्मात्त्वं जय देवि रक्ष धरणीं गौरि प्रसीदस्व नः ॥ १ ॥
त्वमात्मा त्वं ब्रह्म त्रिगुणरहितं विश्वजननि
स्वयं भूत्वा योषित्पुरुषविषयाहो जगति च।
करोष्येवं क्रीडां स्वगुणवशतस्ते च जननीं
वदन्ति त्वां लोकाः स्मरहरवरस्वामिरमणीम् ॥ २ ॥
त्वं स्वेच्छावशतः कदा प्रतिभवस्वंशेन शम्भुः पुमा-
न्स्त्रीरूपेण शिवे स्वयं विहरसि त्रैलोक्यसम्मोहिनि।
सैव त्वं निजलीलया प्रतिभवन् कृष्णः कदाचित्पुमान्
शम्भुं सम्परिकल्प्य चात्ममहिषीं राधां रमस्यम्बिके ॥ ३ ॥

आपसे कोई भी भय नहीं है। देवि! आपकी जय हो। गौरि! आप तीनों लोकोंमें लज्जारूपसे व्याप्त हैं, अतः पृथ्वीकी रक्षा करें और हमलोगोंपर प्रसन्न हों ॥ १ ॥

विश्वजननी! आप सर्वात्मा हैं और आप तीनों गुणोंसे रहित ब्रह्म हैं। अहो, अपने गुणोंके वशीभूत होकर आप ही स्त्री तथा पुरुषका स्वरूप धारण करके संसारमें इस प्रकारकी क्रीडा करती हैं और लोग आप जगज्जननीको कामदेवके विनाशक परमेश्वर शिवकी रमणी कहते हैं ॥ २ ॥

तीनों लोकोंको सम्मोहित करनेवाली शिवे! आप अपनी इच्छाके अनुसार अपने अंशसे कभी पुरुषरूपमें शिव बन जाती हैं और स्वयं स्त्रीरूपमें विद्यमान रहकर उनके साथ विहार करती हैं। अम्बिके! वे ही आप अपनी लीलासे कभी पुरुषरूपमें कृष्णका रूप धारण कर लेती हैं और उनमें शिवकी परिभावना कर स्वयं कृष्णकी पटरानी राधा बनकर उनके साथ रमण करती हैं ॥ ३ ॥

प्रसीद मातर्देवेशि जगद्रक्षणकारिणि।
विरम त्वमिदानीं तु धरणीरक्षणाय वै॥ ४॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे ब्रह्माद्यैः कृता पार्वतीस्तुतिः सम्पूर्णा॥

१७—श्रीसीताजीकृत गौरीवन्दना

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी॥
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता॥
नहिं तव आदि मध्य अवसाना।
अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना॥

जगत्‌की रक्षा करनेवाली देवेश्वरि! माता! प्रसन्न होइये और पृथ्वीकी रक्षाके लिये अब इस लीलाविलाससे विरत हो जाइये॥ ४॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणमें ब्रह्मादि देवताओंद्वारा की गयी पार्वतीस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

हे श्रेष्ठ पर्वतोंके राजा हिमाचलकी पुत्री पार्वती! आपकी जय हो, जय हो; हे महादेवजीके मुखरूपी चन्द्रमाकी [ओर टकटकी लगाकर देखनेवाली] चकोरी! आपकी जय हो; हे हाथीके मुखवाले गणेशजी और छः मुखवाले स्वामिकार्तिकजीकी माता! हे जगज्जननी! हे बिजलीकी-सी कान्तियुक्त शरीरवाली! आपकी जय हो!

आपका न आदि है, न मध्य है और न अन्त है। आपके असीम

भव भव बिभव पराभव कारिनि।
बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि॥
पतिदेवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेष॥
सेवत तोहि सुलभ फल चारी।
बरदायनी पुरारि पिआरी॥
देबि पूजि पद कमल तुम्हारे।
सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें।
बसहु सदा उर पुर सबही कें॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं।
अस कहि चरन गहे बैदेहीं॥

प्रभावको वेद भी नहीं जानते। आप संसारका उद्भव, पालन और नाश करनेवाली हैं। विश्वको मोहित करनेवाली और स्वतन्त्ररूपसे विहार करनेवाली हैं।

पतिको इष्टदेव माननेवाली श्रेष्ठ नारियोंमें हे माता! आपकी प्रथम गणना है। आपकी अपार महिमाको हजारों सरस्वती और शेषजी भी नहीं कह सकते।

हे [भक्तोंको मुँहमाँगा] वर देनेवाली! हे त्रिपुरके शत्रु शिवजीकी प्रिय पत्नी! आपकी सेवा करनेसे चारों फल सुलभ हो जाते हैं। हे देवि! आपके चरणकमलोंकी पूजा करके देवता, मनुष्य और मुनि सभी सुखी हो जाते हैं।

मेरे मनोरथको आप भलीभाँति जानती हैं; क्योंकि आप सदा सबके हृदयरूपी नगरीमें निवास करती हैं। इसी कारण मैंने उसको प्रकट नहीं किया। ऐसा कहकर जानकीजीने उनके चरण पकड़ लिये।

बिनय प्रेम बस भई भवानी।
खसी माल मूरति मुसुकानी॥
सादर सियँ प्रसादु सिर धरेऊ।
बोली गौरि हरषु हियँ भरेऊ॥
सुनु सिय सत्य असीस हमारी।
पूजिहि मन कामना तुम्हारी॥
नारद बचन सदा सुचि साचा।
सो बरु मिलिहि जाहिं मनु राचा॥
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो॥

गिरिजाजी सीताजीके विनय और प्रेमके वशमें हो गयीं। उन [-के गले]-की माला खिसक पड़ी और मूर्ति मुसकरायी। सीताजीने आदरपूर्वक उस प्रसाद (माला)-को सिरपर धारण किया। गौरीजीका हृदय हर्षसे भर गया और वे बोलीं—

हे सीता! हमारी सच्ची आसीस सुनो, तुम्हारी मनःकामना पूरी होगी। नारदजीका वचन सदा पवित्र (संशय, भ्रम आदि दोषोंसे रहित) और सत्य है। जिसमें तुम्हारा मन अनुरक्त हो गया है, वही वर तुमको मिलेगा।

जिसमें तुम्हारा मन अनुरक्त हो गया है, वही स्वभावसे ही सुन्दर साँवला वर (श्रीरामचन्द्रजी) तुमको मिलेगा। वह दयाका खजाना और सुजान (सर्वज्ञ) है, तुम्हारे शील और स्नेहको जानता है। इस प्रकार

एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चलीं॥
जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे॥

(श्रीरामचरितमानस)

१८—दशमयीबालात्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम्

श्रीकाली बगलामुखी च ललिता धूम्रावती भैरवी
मातङ्गी भुवनेश्वरी च कमला श्रीवज्रवैरोचनी।
तारा पूर्वमहापदेन कथिता विद्या स्वयं शम्भुना
लीलारूपमयी च देशदशधा बाला तु मां पातु सा॥ १॥

श्रीगौरीजीका आशीर्वाद सुनकर जानकीजीसमेत सब सखियाँ हृदयमें हर्षित हुईं। तुलसीदासजी कहते हैं—भवानीजीको बार-बार पूजकर सीताजी प्रसन्न मनसे राजमहलको लौट चलीं।

गौरीजीको अनुकूल जानकर सीताजीके हृदयको जो हर्ष हुआ वह कहा नहीं जा सकता। सुन्दर मंगलोंके मूल उनके बायें अंग फड़कने लगे।

प्रारम्भसे ही सर्वोत्कृष्ट पद धारण करनेवाले स्वयं भगवान् शिवके द्वारा श्रीकाली, बगलामुखी, ललिता, धूम्रावती, भैरवी, मातंगी, भुवनेश्वरी, कमला, श्रीवज्रवैरोचनी तथा तारा—इन दस प्रकारके अपने ही अंशोंके रूपमें कही गयी लीलारूपमयी वे दस महाविद्यास्वरूपिणी भगवती बाला मेरी रक्षा करें॥ १॥

श्यामां श्यामघनावभासरुचिरां नीलालकालङ्कृतां
बिम्बोष्ठीं बलिशत्रुवन्दितपदां बालार्ककोटिप्रभाम्।
त्रासत्राणकृपाणमुण्डदधतीं भक्ताय दानोद्यतां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं भगवतीं बालां स्वयं कालिकाम्॥ २॥
ब्रह्मास्त्रां सुमुखीं बकारविभवां बालां बलाकीनिभां
हस्तान्यस्तसमस्तवैरिरसनामन्ये दधानां गदाम्।
पीतां भूषणगन्धमाल्यरुचिरां पीताम्बराङ्गां वरां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं भगवतीं बालां च बगलामुखीम्॥ ३॥
बालार्कश्रुतिभास्करां त्रिनयनां मन्दस्मितां सन्मुखीं
वामे पाशधनुर्धरां सुविभवां बाणं तथा दक्षिणे।

जो श्यामवर्णके विग्रहवाली हैं, जो श्याम मेघकी आभाके समान परम सुन्दर लगती हैं, जो नीले वर्णके घुँघराले केशोंसे अलंकृत हैं, बिम्बाफलके समान जिनके ओष्ठ हैं, बलिशत्रु इन्द्र जिनके चरणोंकी वन्दना करते हैं, जो करोड़ों बालसूर्यकी प्रभासे सम्पन्न हैं, भयसे रक्षाके लिये जो कृपाण तथा मुण्ड धारण किये रहती हैं, जो भक्तोंको वर प्रदान करने-हेतु सदा तत्पर रहती हैं, उन संकटनाशिनी साक्षात् कालिकास्वरूपिणी भगवती बालाकी मैं वन्दना करता हूँ॥ २॥

ब्रह्मास्त्र धारण करनेवाली, सुन्दर मुखमण्डलवाली, बकारबीज वैभवसे सम्पन्न, बलाकीके सदृश धवल स्वरूपवाली, एक हाथसे समस्त शत्रुओंकी जिह्वाओंको पकड़े रहनेवाली तथा दूसरे हाथमें गदा धारण किये रहनेवाली, पीले वर्णके आभूषण-गन्ध तथा माला धारण करनेसे परम सुन्दर प्रतीत होनेवाली, पीताम्बरसे सुशोभित अंगोंवाली तथा उत्तम चरित्रवाली उन संकटनाशिनी बगलामुखीस्वरूपिणी भगवती बालाकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ३॥

कानोंमें बाल-सूर्यके समान प्रदीप्त आभूषण धारण करनेसे जाज्वल्यमान

पारावारविहारिणीं परमयीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं भगवतीं बालां स्वयं षोडशीम् ॥ ४ ॥
दीर्घां दीर्घकुचामुदग्रदशनां दुष्टच्छिदां देवतां
क्रव्यादां कुटिलेक्षणां च कुटिलां काकध्वजां क्षुत्कृशाम् ।
देवीं सूर्पकरां मलीनवसनां तां पिप्पलादार्चितां
बालां सङ्कटनाशिनीं भगवतीं ध्यायामि धूमावतीम् ॥ ५ ॥
उद्यत्कोटिदिवाकरप्रतिभटां बालार्कभाकर्पटां
मालापुस्तकपाशमङ्कुशधरां दैत्येन्द्रमुण्डस्रजाम् ।

प्रतीत होनेवाली, तीन नेत्रोंसे सुशोभित, मन्द मुस्कानवाली, सुन्दर मुखमण्डलवाली, बायें हाथोंमें पाश तथा धनुष और दाहिने हाथोंमें बाण धारण करनेवाली, परम ऐश्वर्यसे सम्पन्न, सुधासिन्धुमें विहार करनेवाली, पराशक्तिस्वरूपिणी तथा कमलके आसनपर विराजमान उन संकटनाशिनी साक्षात् षोडशीस्वरूपिणी भगवती बालाकी मैं वन्दना करता हूँ ॥ ४ ॥

दीर्घ विग्रहवाली, विशाल पयोधरोंसे सम्पन्न, उभरी हुई दंतपंक्तिसे युक्त, दुष्टोंका संहार करनेवाली, देवतास्वरूपिणी, मांसका आहार करनेवाली, कुटिल नेत्रोंवाली, कुटिल स्वभाववाली, काक-ध्वजासे सुशोभित [रथपर विराजमान], भूखके कारण दुर्बल विग्रहवाली, देवीस्वरूपा, हाथमें सूप धारण करनेवाली, मलिन वस्त्र धारण करनेवाली तथा पिप्पलाद ऋषिसे पूजित उन संकटनाशिनी धूमावतीस्वरूपिणी भगवती बालाका मैं ध्यान करता हूँ ॥ ५ ॥

उगते हुए करोड़ों सूर्योंकी कान्तिको तिरस्कृत करनेवाली, बाल-सूर्यकी प्रभाके समान अरुण वस्त्र धारण करनेवाली, अपने हाथोंमें माला-

पीनोत्तुङ्गपयोधरां त्रिनयनां ब्रह्मादिभिः संस्तुतां
बालां सङ्कटनाशिनीं भगवतीं श्रीभैरवीं धीमहि॥ ६ ॥
वीणावादनतत्परां त्रिनयनां मन्दस्मितां सन्मुखीं
वामे पाशधनुर्धरां तु निकरे बाणं तथा दक्षिणे।
पारावारविहारिणीं परमयीं ब्रह्मासने संस्थितां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं भगवतीं मातङ्गिनीं बालिकाम्॥ ७ ॥
उद्यत्सूर्यनिभां च इन्दुमुकुटामिन्दीवरे संस्थितां
हस्ते चारुवराभयं च दधतीं पाशं तथा चाङ्कुशम्।
चित्रालङ्कृतमस्तकां त्रिनयनां ब्रह्मादिभिः सेवितां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं च भुवनेशीमादिबालां भजे॥ ८ ॥

पुस्तक-पाश और अंकुश धारण करनेवाली, दैत्यराजके मुण्डकी माला धारण करनेवाली, विशाल तथा उन्नत पयोधरोंवाली, तीन नेत्रोंवाली तथा ब्रह्मा आदि देवताओंसे सम्यक् स्तुत होनेवाली उन संकटनाशिनी श्रीभैरवीस्वरूपिणी भगवती बालाका मैं ध्यान करता हूँ॥ ६ ॥

वीणा बजानेमें तल्लीन, तीन नेत्रोंसे सुशोभित, मन्द मुसकानसे युक्त, सामनेकी ओर मुख करके विराजमान, बायें हाथोंमें पाश तथा धनुष और दाहिने हाथोंमें बाण धारण करनेवाली, चैतन्यसागरमें विहार करनेवाली तथा ब्रह्मासनपर विराजनेवाली परमयी उन संकटनाशिनी मातंगिनीस्वरूपिणी भगवती बालाकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ७ ॥

उगते हुए सूर्यके सदृश प्रभावाली, चन्द्र-मुकुटसे शोभा पानेवाली, रक्तकमलके आसनपर विराजमान, हाथोंमें सुन्दर वर तथा अभय मुद्रा और पाश तथा अंकुश धारण करनेवाली, चित्रोंसे अलंकृत मस्तकवाली, तीन नेत्रोंवाली, ब्रह्मा आदि देवताओंसे सुसेवित उन संकटनाशिनी भुवनेशीस्वरूपिणी भगवती आदिबालाका मैं भजन करता हूँ॥ ८ ॥

देवीं काञ्चनसंनिभां त्रिनयनां फुल्लारविन्दस्थितां
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलाम्।
प्रालेयाचलसंनिभैश्च करिभिराषिञ्च्यमानां सदा
बालां सङ्कटनाशिनीं भगवतीं लक्ष्मीं भजे चेन्दिराम्॥ ९ ॥
सच्छिन्नां स्वशिरोविकीर्णकुटिलां वामे करे बिभ्रतीं
तृप्तास्यस्वशरीरजैश्च रुधिरैः सन्तर्पयन्तीं सखीम्।
सद्भक्ताय वरप्रदाननिरतां प्रेतासनाध्यासिनीं
बालां सङ्कटनाशिनीं भगवतीं श्रीछिन्नमस्तां भजे॥ १० ॥

सुवर्णके समान जिनकी कान्ति है, जो तीन नेत्रोंसे सुशोभित हो रही हैं, जो विकसित कमलके आसनपर स्थित हैं, जिन्होंने अपने हाथोंमें वर-अभय तथा कमलद्वय धारण कर रखा है, मस्तकपर किरीट धारण करनेसे जो प्रकाशमान हैं तथा हिमालयके सदृश [चार श्वेतवर्णके] हाथियोंके द्वारा [अपनी शुण्डोंसे उठाये गये स्वर्ण-कलशोंसे] जो निरन्तर अभिषिक्त हो रही हैं, उन संकटनाशिनी इन्दिरासंज्ञक लक्ष्मीस्वरूपिणी भगवती बालाको मैं वन्दना करता हूँ॥ ९॥

पूर्णरूपसे कटे मस्तकवाली, अपने कटे सिरके कारण कुटिल प्रतीत होनेवाली, कटे सिरको अपने बायें हाथमें धारण करनेवाली, तृप्त मुखमण्डलवाली, अपने शरीरसे निकले रक्तसे अपनी सखीको संतृप्त करनेवाली, सद्भक्तोंको वरदान देनेमें तत्पर रहनेवाली और प्रेतासनपर विराजमान रहनेवाली उन संकटनाशिनी छिन्नमस्तास्वरूपिणी भगवती बालाको मैं वन्दना करता हूँ॥ १०॥

उग्रामेकजटामनन्तसुखदां दूर्वादलाभामजां
कर्त्रीखड्गकपालनीलकमलान् हस्तैर्वहन्तीं शिवाम्।
कण्ठे मुण्डस्रजां करालवदनां कञ्जासने संस्थितां
वन्दे सङ्कटनाशिनीं भगवतीं बालां स्वयं तारिणीम्॥ ११॥

मुखे श्रीमातङ्गी तदनु किल तारा च नयने
तदन्तरगा काली भृकुटिसदने भैरवि परा।
कटौ छिन्ना धूमावती जय कुचेन्दौ कमलजा
पदांशे ब्रह्मास्त्रा जयति किल बाला दशमयी॥ १२॥

जो अत्यन्त उग्र स्वभाववाली हैं, जो एक जटावाली हैं, जो परम सुखदायिनी हैं, दूर्वादलकी आभाके समान जिनका वर्ण है, जो जन्मरहित हैं, जिन्होंने अपने हाथोंमें कैंची-खड्ग-कपाल और नीलकमल धारण कर रखा है, जो कल्याणमयी हैं, जिनके गलेमें मुण्डमाला सुशोभित हो रही है, जिनका मुखमण्डल भयंकर है तथा जो कमलके आसनपर विराजमान हैं, उन संकट-नाशिनी साक्षात् तारास्वरूपिणी भगवती बालाकी मैं वन्दना करता हूँ॥ ११॥

जिनके मुखमें श्रीमातंगी, उसके बाद नेत्रमें भगवती तारा, उसके भीतर स्थित रहनेवाली काली, भृकुटिदेशमें पराम्बा भैरवी, कटि-प्रदेशमें छिन्नमस्ता और धूमावती, चन्द्रसदृश आभावाले वक्ष-देशमें भगवती कमला और पदभागमें भगवती ब्रह्मास्त्रा विराजमान हैं, ऐसी उन दशविद्यास्वरूपिणी भगवती बालाकी बार-बार जय हो॥ १२॥

विराजन्मन्दारद्रुमकुसुमहारस्तनतटी
परित्रासत्राणास्फटिकगुटिकापुस्तकवरा ।
गले रेखास्तिस्रो गमकगतिगीतैकनिपुणा
सदा पीता हाला जयति किल बाला दशमयी ॥ १३ ॥

॥ इति श्रीमेरुतन्त्रे दशमयीबालात्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

१९—देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥

जिनका वक्षःस्थल मन्दारवृक्षके पुष्पोंके हारसे सुशोभित हो रहा है; जो अपने हाथोंमें महान् भयसे रक्षा करनेवाली अभय मुद्रा, स्फटिककी गुटिका, पुस्तक तथा वर मुद्रा धारण किये हुई हैं, जिनके गलेमें तीन रेखाएँ सुशोभित हैं; जो गमक-गतिसे युक्त गीत गानेमें परम निपुणा हैं और सदा मधुपानमें निरत रहती हैं; उन दशविद्यास्वरूपिणी भगवती बालाकी जय हो ॥ १३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमेरुतन्त्रमें दशमयीबालात्रिपुरसुन्दरीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

माँ! मैं न मन्त्र जानता हूँ, न यन्त्र; अहो! मुझे स्तुतिका भी ज्ञान नहीं है। न आवाहनका पता है, न ध्यानका। स्तोत्र और कथाकी भी जानकारी नहीं है। न तो तुम्हारी मुद्राएँ जानता हूँ और न मुझे व्याकुल होकर विलाप करना ही आता है; परंतु एक बात जानता हूँ, केवल तुम्हारा अनुसरण—तुम्हारे पीछे चलना। जो कि सब क्लेशोंको—समस्त दुःख-विपत्तियोंको हर लेनेवाला है ॥ १ ॥

विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया

विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।

तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥ २॥

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः

परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।

मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥ ३॥

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता

न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया।

सबका उद्धार करनेवाली कल्याणमयी माता! मैं पूजाकी विधि नहीं जानता, मेरे पास धनका भी अभाव है, मैं स्वभावसे भी आलसी हूँ तथा मुझसे ठीक-ठीक पूजाका सम्पादन हो भी नहीं सकता; इन सब कारणोंसे तुम्हारे चरणोंकी सेवामें जो त्रुटि हो गयी है, उसे क्षमा करना; क्योंकि कुपुत्रका होना सम्भव है, किंतु कहीं भी कुमाता नहीं होती॥ २॥

माँ! इस पृथ्वीपर तुम्हारे सीधे-सादे पुत्र तो बहुत-से हैं, किंतु उन सबमें मैं ही अत्यन्त चपल तुम्हारा बालक हूँ; मेरे-जैसा चञ्चल कोई विरला ही होगा। शिवे! मेरा जो यह त्याग हुआ है, यह तुम्हारे लिये कदापि उचित नहीं है; क्योंकि संसारमें कुपुत्रका होना सम्भव है, किंतु कहीं भी कुमाता नहीं होती॥ ३॥

जगदम्ब! मात:! मैंने तुम्हारे चरणोंकी सेवा कभी नहीं की, देवि! तुम्हें अधिक धन भी समर्पित नहीं किया; तथापि मुझ-जैसे अधमपर जो

तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥ ४॥
परित्यक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्॥ ५॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटिकनकैः।

तुम अनुपम स्नेह करती हो, इसका कारण यही है कि संसारमें कुपुत्र पैदा हो सकता है, किंतु कहीं भी कुमाता नहीं होती॥ ४॥

गणेशजीको जन्म देनेवाली माता पार्वती! [अन्य देवताओंकी आराधना करते समय] मुझे नाना प्रकारकी सेवाओंमें व्यग्र रहना पड़ता था, इसलिये पचासी वर्षसे अधिक अवस्था बीत जानेपर मैंने देवताओंको छोड़ दिया है, अब उनकी सेवा-पूजा मुझसे नहीं हो पाती, अतएव उनसे कुछ भी सहायता मिलनेकी आशा नहीं है। इस समय यदि तुम्हारी कृपा नहीं होगी तो मैं अवलम्बरहित होकर किसकी शरणमें जाऊँगा॥ ५॥

माता अपर्णा! तुम्हारे मन्त्रका एक अक्षर भी कानमें पड़ जाय तो उसका फल यह होता है कि मूर्ख चाण्डाल भी मधुपाकके समान मधुर वाणीका उच्चारण करनेवाला उत्तम वक्ता हो जाता है, दीन मनुष्य भी करोड़ों स्वर्ण-मुद्राओंसे सम्पन्न हो चिरकालतक निर्भय विहार करता

तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ६ ॥
चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥
न मोक्षस्याकाङ्क्षा भवविभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥ ८ ॥

रहता है। जब मन्त्रके एक अक्षरके श्रवणका ऐसा फल है तो जो लोग विधिपूर्वक जपमें लगे रहते हैं, उनके जपसे प्राप्त होनेवाला उत्तम फल कैसा होगा ? इसको कौन मनुष्य जान सकता है ॥ ६ ॥

भवानी ! जो अपने अंगोंमें चिताकी राख—भभूत लपेटे रहते हैं, जिनका विष ही भोजन है, जो दिगम्बरधारी (नग्न रहनेवाले) हैं, मस्तकपर जटा और कण्ठमें नागराज वासुकिको हारके रूपमें धारण करते हैं तथा जिनके हाथमें कपाल (भिक्षापात्र) शोभा पाता है, ऐसे भूतनाथ पशुपति भी जो एकमात्र 'जगदीश' की पदवी धारण करते हैं, इसका क्या कारण है ? यह महत्त्व उन्हें कैसे मिला, यह केवल तुम्हारे पाणिग्रहणकी परिपाटीका फल है; तुम्हारे साथ विवाह होनेसे ही उनका महत्त्व बढ़ गया ॥ ७ ॥

मुखमें चन्द्रमाकी शोभा धारण करनेवाली माँ ! मुझे मोक्षकी इच्छा नहीं है, संसारके वैभवकी भी अभिलाषा नहीं है; न विज्ञानकी अपेक्षा है, न सुखकी आकांक्षा; अतः तुमसे मेरी यही याचना है कि मेरा जन्म 'मृडानी, रुद्राणी, शिव, शिव, भवानी'—इन नामोंका जप करते हुए बीते ॥ ८ ॥

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव॥ ९ ॥

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं
करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः
क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति॥ १० ॥

जगदम्ब विचित्रमत्र किं
परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि।

माँ श्यामा! नाना प्रकारकी पूजन-सामग्रियोंसे कभी विधिपूर्वक तुम्हारी आराधना मुझसे न हो सकी। सदा कठोर भावका चिन्तन करनेवाली मेरी वाणीने कौन-सा अपराध नहीं किया है! फिर भी तुम स्वयं ही प्रयत्न करके मुझ अनाथपर जो किंचित् कृपादृष्टि रखती हो, माँ! यह तुम्हारे ही योग्य है। तुम्हारी-जैसी दयामयी माता ही मेरे-जैसे कुपुत्रको भी आश्रय दे सकती है॥ ९॥

माता दुर्गे! करुणासिन्धु महेश्वरी! मैं विपत्तियोंमें फँसकर आज जो तुम्हारा स्मरण करता हूँ [पहले कभी नहीं करता रहा], इसे मेरी शठता न मान लेना; क्योंकि भूख-प्याससे पीड़ित बालक माताका ही स्मरण करते हैं॥ १०॥

जगदम्ब! मुझपर जो तुम्हारी पूर्ण कृपा बनी हुई है, इसमें

अपराधपरम्परापरं
न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥ ११ ॥
मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२०—देवीस्तोत्रम्

श्रीभगवानुवाच

नमो देव्यै प्रकृत्यै च विधात्र्यै सततं नमः।
कल्याण्यै कामदायै च वृद्ध्यै सिद्ध्यै नमो नमः ॥ १ ॥
सच्चिदानन्दरूपिण्यै संसारारणये नमः।
पञ्चकृत्यविधात्र्यै ते भुवनेश्यै नमो नमः ॥ २ ॥

आश्चर्यकी कौन-सी बात है, पुत्र अपराध-पर-अपराध क्यों न करता जाता हो, फिर भी माता उसकी उपेक्षा नहीं करती ॥ ११ ॥

महादेवि! मेरे समान कोई पातकी नहीं है और तुम्हारे समान दूसरी कोई पापहारिणी नहीं है; ऐसा जानकर जो उचित जान पड़े, वह करो ॥ १२ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमत् शंकराचार्यविरचित देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

भगवान् विष्णुने कहा—प्रकृति एवं विधात्री देवीको मेरा निरन्तर नमस्कार है। कल्याणी, कामदा, वृद्धि तथा सिद्धि देवीको बार-बार नमस्कार है। सच्चिदानन्दरूपिणी तथा संसारकी योनिस्वरूपा देवीको नमस्कार है। आप पंचकृत्यविधात्री* तथा श्रीभुवनेश्वरीको बार-बार नमस्कार है ॥ १-२ ॥

* पंचकृत्य—सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह।

सर्वाधिष्ठानरूपायै कूटस्थायै नमो नमः।
अर्धमात्रार्थभूतायै हृल्लेखायै नमो नमः॥ ३॥
ज्ञातं मयाऽखिलमिदं त्वयि सन्निविष्टं
त्वत्तोऽस्य सम्भवलयावपि मातरद्य।
शक्तिश्च तेऽस्य करणे विततप्रभावा
ज्ञाताऽधुना सकललोकमयीति नूनम्॥ ४॥
विस्तार्य सर्वमखिलं सदसद्विकारं
सन्दर्शयस्यविकलं पुरुषाय काले।
तत्त्वैश्च षोडशभिरेव च सप्तभिश्च
भासीन्द्रजालमिव नः किल रञ्जनाय॥ ५॥

समस्त संसारकी एकमात्र अधिष्ठात्री तथा कूटस्थरूपा देवीको बार-बार नमस्कार है। ब्रह्मानन्दमयी अर्धमात्रात्मिका एवं हृल्लेखा-रूपिणी देवीको बार-बार नमस्कार है॥ ३॥

हे जननि! मैंने जान लिया कि यह समस्त विश्व आपमें समाहित है तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्डकी सृष्टि एवं संहार भी आप ही करती हैं। इस ब्रह्माण्डके निर्माणमें आपकी विस्तृत प्रभाववाली शक्ति ही मुख्य हेतु है, अतः मुझे अब ज्ञात हो गया है कि आप ही सम्पूर्ण लोकमें व्याप्त हैं॥ ४॥

इस सत् एवं असत् रूप सम्पूर्ण जगत्का विस्तार करके उस चिद्ब्रह्म पुरुषके समक्ष यथासमय आप इसे समग्ररूपमें प्रस्तुत करती हैं। इस प्रकार अपनी प्रसन्नताके लिये सोलह तथा अन्य सात तत्त्वोंके साथ आपकी क्रीडा हमें इन्द्रजालके समान मनोरंजनकारिणी प्रतीत होती है॥ ५॥

न त्वामृते किमपि वस्तुगतं विभाति
व्याप्यैव सर्वमखिलं त्वमवस्थिताऽसि।
शक्तिं विना व्यवहृतो पुरुषोऽप्यशक्तो
बम्भण्यते जननि बुद्धिमता जनेन॥ ६॥
प्रीणासि विश्वमखिलं सततं प्रभावैः
स्वैस्तेजसा च सकलं प्रकटीकरोषि।
अस्त्येव देवि तरसा किल कल्पकाले
को वेद देवि चरितं तव वैभवस्य॥ ७॥
त्राता वयं जननि ते मधुकैटभाभ्यां
लोकाश्च ते सुविततः खलु दर्शिता वै।
नीताः सुखस्य भवने परमां च कोटिं
यद्दर्शनं तव भवानि महाप्रभावम्॥ ८॥

हे जननि! आपसे रहित यहाँ कोई भी वस्तु दिखायी नहीं देती; आप ही समस्त जगत्को व्याप्त करके स्थित रहती हैं। बुद्धिमान् पुरुषोंका कथन है कि आपकी शक्तिके बिना वह परमपुरुष भी कुछ भी करनेमें असमर्थ है॥ ६॥

हे माता! आप अपने कृपाप्रभावसे सारे संसारका सदा कल्याण करती हैं। हे देवि! आप ही अपने तेजसे सृष्टिकालमें सम्पूर्ण जगत्को उत्पन्न करती हैं तथा प्रलयकालमें इसका शीघ्र ही संहार कर डालती हैं। हे देवि! आपके वैभवके लीला-चरित्रको भलीभाँति जाननेमें कौन समर्थ है?॥ ७॥

हे जननि! मधु-कैटभ नामक दोनों दानवोंसे आपने हमारी रक्षा की है, आपने ही हमलोगोंको अपने अनेक विस्तृत लोक दिखाये तथा अपने-अपने भवनमें हमें परमानन्दका अनुभव कराया; हे भवानि! यह आपके दर्शनका ही महान् प्रभाव है॥ ८॥

नाहं भवो न च विरिञ्चि विवेद मातः
कोऽन्यो हि वेत्ति चरितं तव दुर्विभाव्यम्।
कानीह सन्ति भुवनानि महाप्रभावे
ह्यस्मिन्भवानि रचिते रचनाकलापे॥ ९ ॥
अस्माभिरत्र भुवने हरिरन्य एव
दृष्टः शिवः कमलजः प्रथितप्रभावः।
अन्येषु देवि भुवनेषु न सन्ति किं ते
किं विद्म देवि विततं तव सुप्रभावम्॥ १० ॥
याचेऽम्ब तेऽङ्घ्रिकमलं प्रणिपत्य कामं
चित्ते सदा वसतु रूपमिदं तवैतत्।
नामापि वक्त्रकुहरे सततं तवैव
संदर्शनं तव पदाम्बुजयोः सदैव॥ ११ ॥

हे माता! जब मैं (विष्णु), शिव तथा ब्रह्मा भी आपके अपूर्व चरित्रको जाननेमें समर्थ नहीं हैं, तब अन्य कोई कैसे जान सकेगा? हे महिमामयी भवानि! आपके रचे हुए इस सृष्टिप्रपंचमें न जाने कितने लोक भरे पड़े हैं॥ ९॥

हमलोगोंने आपके इस लोकमें अद्भुत प्रभाववाले दूसरे विष्णु, शिव तथा ब्रह्माको देखा है। हे देवि! क्या वे देवता अन्यान्य लोकोंमें नहीं होंगे? हमलोग आपकी इस अद्भुत एवं व्यापक महिमाको कैसे जान सकते हैं?॥ १०॥

हे जगदम्बा! मैं आपके चरणोंमें मस्तक नवाकर यही वरदान माँगता हूँ कि आपका यह दिव्य स्वरूप मेरे हृदयमें सदा विराजमान रहे, मेरे मुखरूपी गुहासे निरन्तर आपका ही नाम निकले और मुझे सदैव आपके चरणकमलोंके दर्शन होते रहें॥ ११॥

भृत्योऽयमस्ति सततं मयि भावनीयं
त्वां स्वामिनीति मनसा ननु चिन्तयामि।
एषाऽऽवयोरविरता किल देवि भूया-
द्व्याप्तिः सदैव जननीसुतयोरिवार्ये ॥ १२ ॥
त्वं वेत्सि सर्वमखिलं भुवनप्रपञ्चं
सर्वज्ञता परिसमाप्तिनितान्तभूमिः।
किं पामरेण जगदम्ब निवेदनीयं
यद्युक्तमाचर भवानि तवेङ्गितं स्यात् ॥ १३ ॥
ब्रह्मा सृजत्यवति विष्णुरुमापतिश्च
संहारकारक इयं तु जने प्रसिद्धिः।
किं सत्यमेतदपि देवि तवेच्छया वै
कर्तुं क्षमा वयमजे तव शक्तियुक्ताः ॥ १४ ॥

हे माता! आपकी यह भावना मेरे प्रति सर्वदा बनी रहे कि यह मेरा सेवक है और मैं भी सर्वथा आपको मनसे अपनी स्वामिनी समझता रहूँ। हे आर्ये! इस प्रकार मेरा और आपका माता-पुत्रके रूपमें सम्बन्ध नित्य बना रहे ॥ १२ ॥

हे जगदम्बिके! आप समस्त ब्रह्माण्डप्रपंचको पूर्णरूपसे जानती हैं; क्योंकि जहाँ सर्वज्ञताकी समाप्ति होती है, उसकी अन्तिम सीमा आप ही हैं। हे भवानी! मैं पामर जीव कह ही क्या सकता हूँ? आपको जो उचित लगे, आप वह करें; क्योंकि सब कुछ तो आपहीके संकेतपर होता है ॥ १३ ॥

जगत्में ऐसी प्रसिद्धि है कि ब्रह्मा सृष्टि करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और रुद्र संहार करते हैं, किंतु हे देवि! क्या यह बात सत्य है? हे अजे! सत्य तो यह है कि आपकी इच्छासे तथा आपसे शक्ति प्राप्तकर हम अपना-अपना कार्य करनेमें समर्थ हो पाते हैं ॥ १४ ॥

धात्री धराधरसुते न जगद् बिभर्ति
आधारशक्तिरखिलं तव वै बिभर्ति।
सूर्योऽपि भाति वरदे प्रभया युतस्ते
त्वं सर्वमेतदखिलं विरजा विभासि॥ १५॥
ब्रह्माऽहमीश्वरवरः किल ते प्रभावा-
त्सर्वे वयं जनियुता न यदा तु नित्याः।
केऽन्ये सुराः शतमखप्रमुखाश्च नित्या
नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा॥ १६॥
त्वं चेद्भवानि दयसे पुरुषं पुराणं
जानेऽहमद्य तव सन्निधिगः सदैव।
नोचेदहं विभुरनादिरनीह ईशो
विश्वात्मधीरिति तमःप्रकृतिः सदैव॥ १७॥

हे गिरिजे! यह पृथ्वी इस जगत्‌को धारण नहीं करती है अपितु आपकी आधारशक्ति ही इस समस्त जगत्‌को धारण करती है। हे वरदे! भगवान् सूर्य भी आपके ही आलोकसे युक्त होकर प्रकाशमान हैं, इस प्रकार आप विरजारूपसे इस सम्पूर्ण जगत्‌के रूपमें सुशोभित हो रही हैं॥ १५॥

ब्रह्मा, मैं (विष्णु) तथा श्रेष्ठ शंकर—हम सब निश्चय ही आपके प्रभावसे उत्पन्न होते हैं। जब हम नित्य नहीं हैं तो फिर इन्द्र आदि प्रमुख देवता कैसे नित्य हो सकते हैं? सम्पूर्ण चराचर जगत्‌की जननी तथा सनातन प्रकृतिरूपा आप ही नित्य हैं॥ १६॥

हे भवानी! आपकी सन्निधिमें आनेपर आज मुझे ज्ञात हो गया कि आप मुझ पुराणपुरुषपर सर्वदा दयाभाव बनाये रखती हैं; अन्यथा मैं अपनेको सर्वव्यापी, आदिरहित, निष्काम, ईश्वर तथा विश्वात्मा बुद्धिवाला मान बैठता और सदाके लिये तमोगुणी प्रकृतिवाला हो जाता॥ १७॥

विद्या त्वमेव ननु बुद्धिमतां नराणां
शक्तिस्त्वमेव किल शक्तिमतां सदैव।
त्वं कीर्तिकान्तिकमलामलतुष्टिरूपा
मुक्तिप्रदा विरतिरेव मनुष्यलोके॥ १८॥
गायत्र्यसि प्रथमवेदकला त्वमेव
स्वाहा स्वधा भगवती सगुणार्धमात्रा।
आम्नाय एव विहितो निगमो भवत्या
सञ्जीवनाय सततं सुरपूर्वजानाम्॥ १९॥
मोक्षार्थमेव रचयस्यखिलं प्रपञ्चं
तेषां गताः खलु यतो ननु जीवभावम्।
अंशा अनादिनिधनस्य किलानघस्य
पूर्णार्णवस्य वितता हि यथा तरङ्गाः॥ २०॥

आप निश्चय ही सदासे बुद्धिमान् पुरुषोंकी विद्या तथा शक्तिशाली पुरुषोंकी शक्ति हैं। आप कीर्ति, कान्ति, लक्ष्मी तथा निर्मल तुष्टि-स्वरूपा हैं और इस मनुष्यलोकमें आप ही मोक्ष प्रदान करनेवाली विरक्तिस्वरूपा हैं॥ १८॥

आप ही वेदोंकी प्रथम कला गायत्री हैं। आप ही स्वाहा, स्वधा, सगुणा तथा अर्धमात्रा भगवती हैं। आपने ही देवताओं और पूर्वजोंके संरक्षणके लिये आगम तथा निगमका विधान किया है॥ १९॥

जिस प्रकार पूर्ण महासमुद्रकी विस्तृत तरंगें उस समुद्रका ही अंश होती हैं, उसी प्रकार आदि-अन्तसे हीन निष्कलंक ब्रह्मके अंश ही जीवभावको प्राप्त होते हैं; उन्हें मोक्ष प्राप्त करानेके उद्देश्यसे ही आपने सम्पूर्ण जगत्-प्रपंचका निर्माण किया है॥ २०॥

जीवो यदा तु परिवेत्ति तवैव कृत्यं
त्वं संहरस्यखिलमेतदिति प्रसिद्धम्।
नाट्यं नटेन रचितं वितथेऽन्तरङ्गे
कार्ये कृते विरमसे प्रथितप्रभावा ॥ २१ ॥
त्राता त्वमेव मम मोहमयाद्भवाब्धे-
स्त्वामम्बिके सततमेमि महार्तिदे च।
रागादिभिर्विरचिते वितथे किलान्ते
मामेव पाहि बहुदुःखकरे च काले ॥ २२ ॥
नमो देवि महाविद्ये नमामि चरणौ तव।
सदा ज्ञानप्रकाशं मे देहि सर्वार्थदे शिवे ॥ २३ ॥

॥ इति श्रीमद्देवीभागवते महापुराणे तृतीयस्कन्धे विष्णुना कृतं देवीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

सम्पूर्ण विश्वप्रपंच आपका ही कृत्य है और आप ही उसका संहार भी करती हैं—इस प्रसिद्ध तथ्यको जब जीव जान लेता है तब उसके इस विवेकज्ञानको देखकर व्यापक प्रभाववाली आप उसी प्रकार उपरामको प्राप्त होती हैं, जिस प्रकार अपने द्वारा रचित मिथ्या किंतु चमत्कारपूर्ण नाट्यपर नट संतोष प्राप्त करता है ॥ २१ ॥

हे अम्बिके! आप ही इस मोहमय भवसागरसे मेरी रक्षा कर सकती हैं। राग-द्वेष आदि द्वन्द्वोंसे उत्पन्न अत्यन्त कष्टदायक तथा महान् दुःखप्रद मिथ्यारूप अन्तकालमें मेरी रक्षा कीजियेगा, मैं सदा आपकी शरणमें हूँ ॥ २२ ॥

हे देवि! आपको नमस्कार है। हे महाविद्ये! मैं आपके चरणोंमें बार-बार नमन करता हूँ। हे सर्वार्थदायिनी शिवे! आप मुझे सदा ज्ञानरूपी प्रकाश प्रदान कीजिये ॥ २३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणके तृतीयस्कन्धमें वर्णित विष्णुकृत देवीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

२१—देवीस्तुति

जय जय जगजननि देवि सुर-नर-मुनि-असुर-सेवि,
भुक्ति-मुक्ति-दायिनी, भय-हरणि कालिका।
मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वशर्वरीश-वदनि,
ताप-तिमिर-तरुण-तरणि-किरणमालिका ॥ १ ॥
वर्म, चर्म कर कृपाण, शूल-शेल-धनुषबाण,
धरणि, दलनि दानव-दल, रण-करालिका।
पूतना-पिशाच-प्रेत-डाकिनि-शाकिनि-समेत,
भूत-ग्रह-बेताल-खग-मृगालि-जालिका ॥ २ ॥
जय महेश-भामिनी, अनेक-रूप-नामिनी,
समस्त-लोक-स्वामिनी, हिमशैल-बालिका।

हे जगत्‌की माता! हे देवि!! तुम्हारी जय हो, जय हो। देवता, मनुष्य, मुनि और असुर सभी तुम्हारी सेवा करते हैं। तुम भोग और मोक्ष दोनोंको ही देनेवाली हो। भक्तोंका भय दूर करनेके लिये तुम कालिका हो। कल्याण, सुख और सिद्धियोंकी स्थान हो। तुम्हारा सुन्दर मुख पूर्णिमाके चन्द्रके सदृश है। तुम आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक तापरूपी अन्धकारका नाश करनेके लिये मध्याह्नके तरुण सूर्यकी किरणमाला हो ॥ १ ॥

तुम्हारे शरीरपर कवच है। तुम हाथोंमें ढाल-तलवार, त्रिशूल, साँगी और धनुष-बाण लिये हो। दानवोंके दलका संहार करनेवाली हो, रणमें विकरालरूप धारण कर लेती हो। तुम पूतना, पिशाच, प्रेत और डाकिनी-शाकिनियोंके सहित भूत, ग्रह और बेतालरूपी पक्षी और मृगोंके समूहको पकड़नेके लिये जालरूप हो ॥ २ ॥

हे शिवे! तुम्हारी जय हो। तुम्हारे अनेक रूप और नाम हैं। तुम

रघुपति-पद परम प्रेम, तुलसी यह अचल नेम,
देहु ह्वै प्रसन्न पाहि प्रणत-पालिका ॥ ३ ॥
(विनय-पत्रिका)

२२—भवानीस्तुति

दुसह दोष-दुख, दलनि,
करु देवि दाया।
विश्व-मूलाऽसि, जन-सानुकूलाऽसि,
कर शूलधारिणि महामूलमाया ॥ १ ॥
तडित गर्भाङ्ग सर्वाङ्ग सुन्दर लसत,
दिव्य पट भव्य भूषण विराजैं।

समस्त संसारकी स्वामिनी और हिमाचलकी कन्या हो। हे शरणागतकी रक्षा करनेवाली! मैं तुलसीदास श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें परम प्रेम और अचल नेम चाहता हूँ, सो प्रसन्न होकर मुझे दो और मेरी रक्षा करो ॥ ३ ॥

हे देवि! तुम दुःसह दोष और दुःखोंको दमन करनेवाली हो, मुझपर दया करो। तुम विश्व-ब्रह्माण्डकी मूल (उत्पत्ति-स्थान) हो, भक्तोंपर सदा अनुकूल रहती हो, दुष्टदलनके लिये हाथमें त्रिशूल धारण किये हो और सृष्टिकी उत्पत्ति करनेवाली मूल (अव्याकृत) प्रकृति हो ॥ १ ॥

तुम्हारे सुन्दर शरीरके समस्त अंगोंमें बिजली-सी चमक रही है, उनपर दिव्य वस्त्र और सुन्दर आभूषण शोभित हो रहे हैं।

बालमृग-मंजु खञ्जन-विलोचनि,
चन्द्रवदनि लखि कोटि रतिमार लाजैं ॥ २ ॥
रूप-सुख-शील-सीमाऽसि, भीमाऽसि,
रामाऽसि, वामाऽसि वर बुद्धि बानी।
छमुख-हेरंब-अंबासि, जगदंबिके,
शंभु-जायासि जय जय भवानी ॥ ३ ॥
चंड-भुजदंड-खंडनि, बिहंडनि महिष
मुंड-मद-भंग कर अंग तोरे।
शुंभ-निःशुंभ कुम्भीश रण-केशरिणि,
क्रोध-वारीश अरि-वृन्द बोरे ॥ ४ ॥

तुम्हारे नेत्र मृगछौने और खंजनके नेत्रोंके समान सुन्दर हैं, मुख चन्द्रमाके समान है, तुम्हें देखकर करोड़ों रति और कामदेव लज्जित होते हैं ॥ २ ॥

तुम रूप, सुख और शीलकी सीमा हो; दुष्टोंके लिये तुम भयानक रूप धारण करनेवाली हो। तुम्हीं लक्ष्मी, तुम्हीं पार्वती और तुम्हीं श्रेष्ठ बुद्धिवाली सरस्वती हो। हे जगज्जननि! तुम स्वामिकार्तिकेय और गणेशजीकी माता हो और शिवजीकी गृहिणी हो; हे भवानी! तुम्हारी जय हो, जय हो ॥ ३ ॥

तुम चण्ड दानवके भुजदण्डोंका खण्डन करनेवाली और महिषासुरको मारनेवाली हो, मुण्ड दानवके घमण्डका नाश कर तुम्हींने उसके अंग-प्रत्यंग तोड़े हैं। शुम्भ-निशुम्भरूपी मतवाले हाथियोंके लिये तुम रणमें सिंहिनी हो। तुमने अपने क्रोधरूपी समुद्रमें शत्रुओंके दल-के-दल डुबो दिये हैं ॥ ४ ॥

निगम-आगम-अगम गुर्वि! तव गुन-
कथन, उर्विधर करत जेहि सहसजीहा।
देहि मा, मोहि पन प्रेम यह नेम निज,
राम घनश्याम तुलसी पपीहा॥ ५॥

[विनय-पत्रिका]

वेद, शास्त्र और सहस्र जीभवाले शेषजी तुम्हारा गुणगान करते हैं; परंतु उसका पार पाना उनके लिये बड़ा कठिन है। हे माता! मुझ तुलसीदासको श्रीरामजीमें वैसा ही प्रण, प्रेम और नेम दो, जैसा चातकका श्याम मेघमें होता है॥ ५॥

नवदुर्गा

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्॥
पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्॥
नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः।

प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्तिका नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टाके नामसे प्रसिद्ध है। चौथी मूर्तिको कूष्माण्डा कहते हैं। पाँचवीं दुर्गाका नाम स्कन्दमाता है। देवीके छठे रूपको कात्यायनी कहते हैं। सातवाँ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप महागौरीके नामसे प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गाका नाम सिद्धिदात्री है।

कालीस्तोत्रम्

२३—भद्रकालीस्तुतिः

ब्रह्मविष्णू ऊचतुः

नमामि त्वां विश्वकर्त्रीं परेशीं
नित्यामाद्यां सत्यविज्ञानरूपाम्।
वाचातीतां निर्गुणां चातिसूक्ष्मां
ज्ञानातीतां शुद्धविज्ञानगम्याम्॥ १॥

पूर्णां शुद्धां विश्वरूपां सुरूपां
देवीं वन्द्यां विश्ववन्द्यामपि त्वाम्।
सर्वान्तःस्थामुत्तमस्थानसंस्था-
मीडे कालीं विश्वसम्पालयित्रीम्॥ २॥

मायातीतां मायिनीं वापि मायां
भीमां श्यामां भीमनेत्रां सुरेशीम्।

ब्रह्मा और विष्णु बोले—सर्वसृष्टिकारिणी, परमेश्वरी, सत्यविज्ञान-रूपा, नित्या, आद्याशक्ति! आपको हम प्रणाम करते हैं। आप वाणीसे परे हैं, निर्गुण और अति सूक्ष्म हैं, ज्ञानसे परे और शुद्ध विज्ञानसे प्राप्य हैं॥ १॥

आप पूर्णा, शुद्धा, विश्वरूपा, सुरूपा, वन्दनीया तथा विश्ववन्द्या हैं। आप सबके अन्तःकरणमें वास करती हैं एवं सारे संसारका पालन करती हैं। दिव्य स्थाननिवासिनी आप भगवती महाकालीको हमारा प्रणाम है॥ २॥

महामायास्वरूपा आप मायामयी तथा मायासे अतीत हैं, आप

विद्यां सिद्धां सर्वभूताशयस्था-
मीडे कालीं विश्वसंहारकर्त्रीम् ॥ ३ ॥
नो ते रूपं वेत्ति शीलं न धाम
नो वा ध्यानं नापि मन्त्रं महेशि।
सत्तारूपे त्वां प्रपद्ये शरण्ये
विश्वाराध्ये सर्वलोकैकहेतुम् ॥ ४ ॥
द्यौस्ते शीर्षं नाभिदेशो नभश्च
चक्षूंषि ते चन्द्रसूर्यानलास्ते।
उन्मेषास्ते सुप्रबोधो दिवा च
रात्रिर्मातश्चक्षुषोस्ते निमेषम् ॥ ५ ॥
वाक्यं देवा भूमिरेषा नितम्बं
पादौ गुल्फं जानुजङ्घस्त्वधस्ते।

भीषणा, श्यामवर्णवाली, भयंकर नेत्रोंवाली परमेश्वरी हैं। आप सिद्धियोंसे सम्पन्न, विद्यास्वरूपा, समस्त प्राणियोंके हृदयप्रदेशमें निवास करनेवाली तथा सृष्टिका संहार करनेवाली हैं, आप महाकालीको हमारा नमस्कार है ॥ ३ ॥

महेश्वरी! हम आपके रूप, शील, दिव्य धाम, ध्यान अथवा मन्त्रको नहीं जानते। शरण्ये! विश्वाराध्ये! हम सारी सृष्टिकी कारणभूता और सत्तास्वरूपा आपकी शरणमें हैं ॥ ४ ॥

मातः! द्युलोक आपका सिर है, नभोमण्डल आपका नाभिप्रदेश है। चन्द्र, सूर्य और अग्नि आपके त्रिनेत्र हैं, आपका जागना ही सृष्टिके लिये दिन और जागरणका हेतु है और आपका आँखें मूँद लेना ही सृष्टिके लिये रात्रि है ॥ ५ ॥

देवता आपकी वाणी हैं, यह पृथ्वी आपका नितम्बप्रदेश तथा पाताल आदि नीचेके भाग आपके जङ्घा, जानु, गुल्फ और चरण

प्रीतिर्धर्मोऽधर्मकार्यं हि कोपः
सृष्टिर्बोधः संहृतिस्ते तु निद्रा ॥ ६ ॥
अग्निर्जिह्वा ब्राह्मणास्ते मुखाब्जं
संध्ये द्वे ते भ्रूयुगं विश्वमूर्तिः ।
श्वासो वायुर्बाहवो लोकपालाः
क्रीडा सृष्टिः संस्थितिः संहृतिस्ते ॥ ७ ॥
एवंभूतां देवि विश्वात्मिकां त्वां
कालीं वन्दे ब्रह्मविद्यास्वरूपाम् ।
मातः पूर्णे ब्रह्मविज्ञानगम्ये
दुर्गेऽपारे साररूपे प्रसीद ॥ ८ ॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे ब्रह्मविष्णुकृता भद्रकालीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

हैं। धर्म आपकी प्रसन्नता और अधर्मकार्य आपके कोपके लिये है। आपका जागरण ही इस संसारकी सृष्टि है और आपकी निद्रा ही इसका प्रलय है ॥ ६ ॥

अग्नि आपकी जिह्वा है, ब्राह्मण आपके मुखकमल हैं। दोनों संध्याएँ आपकी दोनों भ्रुकुटियाँ हैं, आप विश्वरूपा हैं, वायु आपका श्वास है, लोकपाल आपके बाहु हैं और इस संसारकी सृष्टि, स्थिति तथा संहार आपकी लीला है ॥ ७ ॥

दुर्गे! ऐसी सर्वस्वरूपा आप महाकालीको हमारा प्रणाम है। आप ब्रह्मविद्यास्वरूपा हैं। ब्रह्मविज्ञानसे ही आपकी प्राप्ति सम्भव है। सर्वसाररूपा, अनन्तस्वरूपिणी माता दुर्गे! आप हमपर प्रसन्न हों ॥ ८ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत ब्रह्मा और विष्णुद्वारा की गयी भद्रकालीस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

२४—श्रीकालिकाष्टकम्

ध्यानम्

गलद्रक्तमुण्डावलीकण्ठमाला
महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला।
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी
महाकालकामाकुला कालिकेयम्॥ १॥

भुजे वामयुग्मे शिरोऽसिं दधाना
वरं दक्षयुग्मेऽभयं वै तथैव।
सुमध्याऽपि तुङ्गस्तनाभारनम्रा
लसद्रक्तसृक्कद्वया सुस्मितास्या॥ २॥

शवद्वन्द्वकर्णावतंसा सुकेशी
लसत्प्रेतपाणिं प्रयुक्तैककाञ्ची।

ध्यान

ये भगवती कालिका गलेमें रक्त टपकते हुए मुण्डसमूहोंकी माला पहने हुए हैं, ये अत्यन्त घोर शब्द कर रही हैं, इनकी सुन्दर दाढ़ें हैं तथा स्वरूप भयानक है, ये वस्त्ररहित हैं, ये श्मशानमें निवास करती हैं, इनके केश बिखरे हुए हैं और ये महाकालके साथ कामलीलामें निरत हैं॥ १॥

ये अपने दोनों बायें हाथोंमें नरमुण्ड और खड्ग लिये हुई हैं तथा अपने दोनों दाहिने हाथोंमें वर और अभयमुद्रा धारण किये हुई हैं। ये सुन्दर कटिप्रदेशवाली हैं, ये उन्नत स्तनोंके भारसे झुकी हुई-सी हैं, इनके ओष्ठ-द्वयका प्रान्त भाग रक्तसे सुशोभित है और इनका मुख-मण्डल मधुर मुस्कानसे युक्त है॥ २॥

इनके दोनों कानोंमें दो शवरूपी आभूषण हैं, ये सुन्दर केशवाली हैं, शवोंके हाथोंसे बनी सुशोभित करधनी ये पहने हुई हैं,